

मुकदमों का विवरण

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम.

निर्मल किशोर भारतीय और ए. एन. आर. (2012 की आपराधिक अपील सं. 1959) 05
अक्टूबर, 2023

[बेला एम. त्रिवेदी और दीपांकर दत्ता, जे. जे.] हेडनोट्स

विचार के लिए विषय:(i) मानहानि का आरोप लगाने वाली एक निजी शिकायत पर विचार करते समय, क्या मजिस्ट्रेट को अभियुक्त को बुलाने से पहले केवल याचिका का हिस्सा बनने वाले आरोपों पर ही अपना विश्वास व्यक्त करना चाहिए या वह अपने न्यायिक दिमाग को धाराओं के अपवादों पर लागू कर सकता है। 499, आई. पी. सी. ने यह कहते हुए शिकायत को खारिज कर दिया कि कथित तथ्य मानहानि का मामला नहीं बनाते हैं?

((ii) क्या और, यदि बिल्कुल भी हो, तो किस हद तक, यह उच्च न्यायालयों के लिए एस द्वारा सहेजी गई अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करने के लिए खुला है। 482, क्र. पी. सी. किसी भी अपवाद का लाभ एस. को देने पर समन आदेश को दरकिनार करके मानहानि के लिए कार्यवाही को रद्द करने के लिए। 499, आई. पी. सी.?

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-जारी करने की प्रक्रिया-मानहानि की शिकायत-मजिस्ट्रेट द्वारा न्यायिक दिमाग का अनुप्रयोग:

आयोजित किया गया: मानहानि की शिकायत के संदर्भ में, जिस स्तर पर मजिस्ट्रेट प्रक्रिया जारी करने के लिए आगे बढ़ता है, उसे शिकायत में लगाए गए आरोपों और अन्य सामग्री (धारा 200/धारा 202 में निर्दिष्ट प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त) के आधार पर अपनी राय बनानी होती है कि क्या 'कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार' मौजूद है जो 'दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त आधार' से अलग है, जिसे मुकदमे में निर्धारण के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए न कि प्रक्रिया जारी होने के स्तर पर-हालांकि कानून में ऐसा कुछ भी नहीं है जो स्पष्ट शब्दों में मजिस्ट्रेट को इस बात पर विचार करने के लिए अनिवार्य करता है कि क्या कोई भी अपवाद धारा 200/धारा 202 में निर्दिष्ट प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त किया गया है। 499, आई. पी. सी. आकर्षित है, इसमें कोई बाधा भी नहीं है-यह कानून नहीं है कि मजिस्ट्रेट किसी भी तरह से इस बात पर विचार करने से वंचित है कि क्या किसी दिए गए मामले में कोई भी अपवाद आकर्षित किया गया है; मजिस्ट्रेट इस तरह से विचार करने से किसी भी तरह से बाधित नहीं है, विशेष रूप से इसलिए कि कोई ऐसा व्यक्ति होने के नाते जो 221 है।

कानूनी रूप से प्रशिक्षित होने पर, यह उम्मीद की जाती है कि प्रक्रिया जारी करते समय उसे इस बात का स्पष्ट अंदाजा होगा कि मानहानि क्या है-यदि, अप्रत्याशित घटना में, शिकायत की सामग्री और शपथ पर सहायक बयानों के साथ-साथ जांच/जांच की रिपोर्ट किसी भी अपवाद के तहत पूर्ण बचाव प्रकट करती है।**499**, आई. पी. सी., मजिस्ट्रेट, न्यायिक दिमाग के उचित अनुप्रयोग पर, इस तरह के आधार पर शिकायत को खारिज करने के लिए न्यायसंगत होगा और यदि इस तरह की बर्खास्तगी में कारणों का समर्थन है तो यह अधिकार क्षेत्र से अधिक कार्य नहीं होगा।[पैरा 45]

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973** -धारा **482**-उच्च न्यायालय की किसी भी अपवाद के लाभ को बढ़ाने पर समन आदेश को दरकिनार करके मानहानि के लिए कार्यवाही को रद्द करने की शक्ति।
499, आईपीसी:

आयोजित किया गया:उच्च न्यायालयों द्वारा यू/एस द्वारा अधिकारिता का प्रयोग।**482**, <आई. डी. 1.....।**482**, Cr.P.C.; ऐसी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए हमेशा उपलब्ध रहते हैं, अर्थात्, प्रशासन के लिए वास्तविक और पर्याप्त न्याय करने के लिए, जिसमें केवल उच्च न्यायालय मौजूद हैं-प्रक्रिया का मुद्दा यू/एस।**204** आर/डब्ल्यू।s.**200**, Cr.P.C. s के अपवादों पर विचार न करने के लिए वास्तव में दूषित नहीं है।**499**, आई. पी. सी. जब तक, निश्चित रूप से, उच्च न्यायालय के समक्ष यह आश्चर्य रूप से प्रदर्शित नहीं किया जाता है कि शिकायत और मजिस्ट्रेट के सामने मौजूद सामग्री के आधार पर और बिना कुछ और होने के, कथित तथ्य प्रथम दृष्टया मानहानि का कारण नहीं बनते हैं और इसके परिणामस्वरूप, कार्यवाही को बंद करने की आवश्यकता है।[पैरा 46 और 47]

दंड संहिता, **1860** -धारा. **499**-धारा के अपवाद।**499** - अभियोग यू/एस पर विचार करने पर ट्रायल कोर्ट।**200 Cr.P.C.** ने दिनांकित **25.03.2010** के क्रम में एक प्रथम दृष्टया फाइंडिंग वापस की जिसमें आरोपी नं।**1**, अपीलार्थी (अभियुक्त सं. **2**) और उसके जिला प्रबंधक दुर्भावनापूर्ण और मानहानिकारक बयानों वाले पत्र लिखने, भेजने, प्रकाशित करने के लिए जिम्मेदार थे और **222**

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

परिणामस्वरूप तीनों अभियुक्त व्यक्तियों को यू/एस. एस. के तहत तलब किया गया।
500/107/34, आई. पी. सी.-स्वामित्व:

आयोजित किया गया:इस स्तर पर, जब विचारण न्यायालय ने समन आदेश दिया, तो दो पहलुओं को संतुष्ट करने की आवश्यकता थी:(1) क्या शिकायतकर्ता की जांच के साथ पढ़ी गई शिकायत की याचिका में किए गए अनियंत्रित आरोप, प्रथम दृष्टया, एक अनुचित कार्य किए जाने

का सुझाव देते हैं, और (2) क्या यह समीचीन है और न्याय के हित में आगे बढ़ना चाहिए- शिकायतकर्ता द्वारा शिकायत की याचिका में लगाए गए आरोपों और निचली अदालत के समक्ष रखे गए साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए और अभियुक्त को समन जारी करने के उसके दिनांक (आईडी1) के आदेश को स्पष्ट रूप से पढ़ने पर, यह प्रतीत नहीं होता है कि उस स्तर पर एक प्रथम दृष्टया मामले का अंत इतना अपमानजनक रूप से अतार्किक है या कानूनी सिद्धांतों और स्वीकार्य मानकों की अवहेलना में है कि यह इस अदालत द्वारा हस्तक्षेप के योग्य होगा- अपीलकर्ता अदालत के समक्ष उपस्थित होने के लिए स्वतंत्र होगा।[पैरा 49,50]

दंड संहिता, **1860 -s.499-s** के लिए अपवाद।**499** - क्या किसी कंपनी पर मानहानि का मुकदमा चलाया जा सकता है जब कथित मानहानिकारक बयान उसके (कंपनी) द्वारा नहीं बल्कि उसके अधिकृत एजेंट द्वारा दिए जाते हैं:

आयोजित किया गया: यह अनिवार्य रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करना चाहिए, जिसका अर्थ है कि मुकदमे के दौरान जो साक्ष्य दिया जाता है उसकी गुणवत्ता और उससे जुड़ा वजन-तत्काल मामले में, अपीलकर्ता-कंपनी द्वारा अभी तक कानून के अनुसार पावर ऑफ अटॉर्नी साबित नहीं किया गया है और इसलिए, न्यायाधीश द्वारा विचार नहीं किया जा सकता था और इस न्यायालय द्वारा भी विचार नहीं किया जा सकता था-भले ही साबित हो जाए, इसके प्रभाव और निहितार्थ पर परीक्षण न्यायालय द्वारा विचार किया जाना आवश्यक है-हालांकि, यदि साक्ष्य से यह स्थापित हो जाता है कि अधिकृत एजेंट ने प्रिंसिपल की सहमति से मानहानिकारक बयान जारी किए थे या कि प्रिंसिपल को सहमति दिए बिना, ऐसे मानहानिकारक बयानों की उचित जानकारी थी, तो भी, एजेंट को ऐसा करने के लिए चेतावनी/फटकार नहीं लगाई।

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक जी. एम. बी. एच. बनाम निर्मल किशोर भारतिया

जहां तक चौथे अपवाद के लाभ का संबंध है, यह अपीलार्थी के लिए है कि वह विचारण न्यायालय के समक्ष यह प्रदर्शित करे कि चौथा अपवाद आकर्षित है, या किसी अन्य बचाव का अनुरोध करे, और परीक्षण के दौरान उसके संबंध में सबूत के अपने बोझ का निर्वहन करे।[पारस 54,55,56,57]

शहरों और अन्य संदर्भों की सूची

बलराज खन्ना और अन्य बनाम मोती राम (1971) 3 एस. सी. सी. 399:[1971] पूरक।एस. सी. आर. 447; सेवाक्रम सोभानी बनाम आर. के. करंजिया (1981) 3 एस. सी. सी. 208:[1981] 3 एस. सी. आर. 627; शत्रुघ्न प्रसाद सिन्हा बनाम राजाभाउ सूरजमल राठू (1996)

6 एससीसी 263:[1996] 5 पूरक।एस. सी. आर. 771; सुब्रमण्यम स्वामी बनाम भारत संघ (2016) 7 एस. सी. सी. 221:[2016] 3 एससीआर 865; राजेंद्र कुमार सीताराम पांडे बनाम उत्तम (1999) 3 एससीसी 134:[1999] 1 एससीआर 580; जवाहरलाल दर्डा

बनाम मनोहरराव गणपतराव कापसीकर (1998) 4 एस. सी. सी. 112; वादिलाल पांचाल बनाम दत्तात्रेय दुलाजी घाडीगांवकर (1961) 1 एस. सी. आर. 1; रामगोपाल गणपतराय रुइया बनाम बॉम्बे राज्य (1958) एस. सी. आर. 618; नेशनल बैंक ऑफ ओमान बनाम बाराकरा

अब्दुल अजीज़ (2013) 2 एससीसी 488:[2012] 11 एस. सी. आर. 500-पर निर्भर।

इरिडियम इंडिया टेलीकॉम लिमिटेड बनाम.मोटोरोला इंकॉर्पोरेटेड एंड ओआरएस। (2011) 1 एससीसी 74:[2010] 14 एस. सी. आर. 591; मॉर्गन टेक्नोलॉजिक्स लिमिटेड बनामराज्य और एएनआर। एल. पी. ए -

668/2010 डीटी।17 सितम्बर 2010:अरुण पुरी बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली राज्य (2022) 15 स्केल 541; सुप्रिया जैन बनाम हरियाणा राज्य (2023) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 765; एमएन दमानी बनाम एसके सिन्हा (2001) 5 एससीसी 156: [2001] 3 एस. सी. आर. 415;

एम. ए. रुमुगम बनाम किट्टू उपनाम कृष्णमूर्ति (2009) 1 एस. सी. सी. 101:[2008] 15 एस. सी. आर. 642; चंद्र देव सिंह बनाम प्रकाश चंद्र बोस [1964] 1 एस. सी. आर. 639;जेफ रे जे. डायरमियर बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (2010) 6 एस. सी. सी. 243: [2010] 7 एससीआर 128; मनोज कुमार तिवारी बनाम मनीष सिसोदिया 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1434; बी. आर. के. अथिथन बनाम सन ग्रुप 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1705; कल्याण चंद्र सरकार बनाम राजेश रंजन (2005) 2 एस. सी. सी. 42; जगदीश राम बनाम राज्य

राजस्थान (2004) 4 एस. सी. सी. 432:[2004] 2 एससीआर 846; चांद धवन (श्रीमती) बनाम जवाहरलाल (1992) 3 एस. सी. सी. 317:[1992] 2 एस. सी. आर. 83-संदर्भित।

अन्य मामलों के विवरणों में आयातित आदेश और आवेदन शामिल हैं

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय:2012 की आपराधिक अपील सं. 1959।

224

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

2010 के सी. आर. एल. एम. सी. No.2845 में नई दिल्ली में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 10.12.2010 से।

रूप:

सुश्री अपर्णा विश्वनाथन, आर. गोपालकृष्णन, अधिवक्ता।अपीलार्थी के लिए।मनोज डी. तनेजा, सुश्री गौरी के. दास मोहंती, स्नेहाशीष मुखर्जी, सुनील फर्नांडीस, सुश्री प्रियांशा शर्मा, अधिवक्ता। उत्तरदाताओं के लिए।

सर्वोच्च
न्यायालय का
निर्णय/आदेश

न्यायाधीश दीपांकर दत्ता, जे.

अपील

1. यह अपील, विशेष अनुमति द्वारा, एक जर्मन कंपनी ("अपीलार्थी", इसके बाद) के कहने पर है। इसमें दिल्ली उच्च न्यायालय के एक विद्वान न्यायाधीश ("विद्वान न्यायाधीश", इसके बाद) के 10 दिसंबर 2010 के एक संक्षिप्त आदेश का उल्लेख है। इस तरह के आदेश द्वारा, विद्वान न्यायाधीश ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 ("दंड प्रक्रिया संहिता") की धारा 482 के तहत एक याचिका 1 को खारिज कर दिया। पी. सी., "इसके बाद) अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किया गया कि इस न्यायालय के निर्णय के आधार पर बनाए रखने योग्य नहीं है

इरिडियम इंडिया टेलीकॉम लिमिटेड बनाम. मोटोरोला इंकॉर्पोरेटेड एंड ओआरएस। 2 और मॉर्गन टेट्रोनिक्स लिमिटेड बनाम में दिल्ली उच्च न्यायालय की पीठ का निर्णय।

राज्य और एनआर। 3.

दिल्ली उच्च न्यायालय से पहले चुनौती

2. अपीलार्थी ने 25 मार्च 2010 को अतिरिक्त मुख्य मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट (एस. ई.), नई दिल्ली ("ट्रायल कोर्ट", इसके बाद) द्वारा धारा 200, सी. आर. पी. के तहत दर्ज शिकायत 4 पर पारित एक आदेश पर आपत्ति जताते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था। प्रतिवादी द्वारा पी. सी. ("शिकायतकर्ता", इसके बाद)। निचली अदालत ने शिकायत पर विचार करने के बाद उक्त आदेश में प्रथम दृष्टया दावा किया कि श्री एम. सी. अग्रवाल (आरोपी संख्या 1), अपीलार्थी (आरोपी संख्या 1)। 2) और इसके जिला प्रबंधक (एशिया), श्री लोरेंजो बोनिसेग्ना (आरोपी)

1 सीआरएल। एम. सी. 2845/2010 2 (2011) 1 एस. सी. 74

3 एलपीए-668/2010 डीटी। 17 सितंबर 2010 4 सीसी No.465/1/09 225

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारतीय [दीपांकर दत्ता, जे.] 226

नहीं। 3) दुर्भावनापूर्ण और मानहानिकारक बयानों वाले उपरोक्त पत्रों को लिखने, भेजने, प्रकाशित करने के लिए संयुक्त रूप से और अलग-अलग रूप से जिम्मेदार थे और

शिकायतकर्ता के खिलाफ अभियोग "और इसके परिणामस्वरूप भारतीय दंड संहिता (आई. पी. सी., इसके बाद) की धाराओं 500/107/34 के तहत तीनों अभियुक्तों को समन भेजा गया।

तथ्य

3. विद्वान न्यायाधीश के समक्ष सम्मन आदेश की ओर ले जाने वाले निर्विवाद और प्रासंगिक तथ्यों पर नीचे ध्यान दिया गया है:

आई. वैश्विक निविदा सं। ई. क्यू./ग्लोबल/2007-09/01 को भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण ("ए. ए. आई.", इसके बाद) द्वारा देश भर के विभिन्न हवाई अड्डों पर 40 (चालीस) एयरफ़ाई एल्ड क्रैश फायर टैंडरों की आपूर्ति के लिए अस्वीकार कर दिया गया था। अपीलार्थी, जर्मनी स्थित सुरक्षा उपकरणों के निर्माता, ने प्रत्यर्थी नं. श्री एम. सी. अग्रवाल के पक्ष में एक पावर ऑफ अटॉर्नी निष्पादित किया। 2 ("अग्रवाल", इसके बाद), जो बृजबासी हाई-टेक उद्योग लिमिटेड के प्रबंध निदेशक थे। अग्रवाल को भारत में अपीलार्थी का स्थानीय प्रतिनिधि नियुक्त किया गया था और उन्हें अन्य बातों के साथ-साथ उन सभी कदमों को उठाने का अधिकार दिया गया था जिन्हें निविदा प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए समीचीन माना गया था।

ii. शिकायतकर्ता की कंपनी, भारतीय व्हीकल्स एंड इंजीनियरिंग प्राइवेट लिमिटेड, उपरोक्त निविदा प्रक्रिया में एक अन्य बोलीदाता, रोसेनबॉयर इंटरनेशनल एजी ("रोसेनबॉयर", इसके बाद) की भारतीय सहयोगी थी।

iii. 21 जुलाई 2008 को, ए. ए. आई. ने अपीलार्थी की बोली को अस्वीकार कर दिया और अंततः इसे रोसेनबॉयर को सौंप दिया। अस्वीकृति के बाद, 2008 में विभिन्न अवसरों पर, अग्रवाल ने निविदा प्रक्रिया में पक्षपात और अनियमितताओं की शिकायत करते हुए नागरिक उड्डयन मंत्री, भारत सरकार, एएआई के अध्यक्ष, मुख्य सतर्कता कार्यालय, एएआई और केंद्रीय सतर्कता आयुक्त, भारत सरकार सहित विभिन्न अधिकारियों को शिकायतों की प्रकृति के चार पत्र जारी किए। इन पत्रों में आरोप लगाया गया है कि शिकायतकर्ता ने अवैध और गलत तरीकों से ए. ए. आई. को रोसेनबॉयर को निविदा देने के लिए राजी किया। ऐसे पत्रों की सामग्री की गणना से बचा जाता है, ऐसा न हो कि वे ही पक्षों के अधिकारों के प्रति पूर्वाग्रह पैदा करें।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

iv. शिकायत पत्रों को देखने के लिए उपरोक्त अधिकारियों की निष्क्रियता से असंतुष्ट, अग्रवाल ने अपीलार्थी के स्थानीय अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में अपनी क्षमता में, 12 अगस्त 2008 को या उसके आसपास भारत संघ और एएआई के खिलाफ एक रिट याचिका 5 पेश करके उच्च

न्यायालय के रिट अधिकार क्षेत्र का आह्वान किया। यह ध्यान देने योग्य है कि भारतीय वाहन और इंजीनियरिंग प्राइवेट लिमिटेड और रोसेनबॉयर को भी कार्यवाही में पक्षकार बनाया गया था। रिट याचिका को 13 फरवरी 2009 को एक विस्तृत आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था, जिसे बाद में चुनौती नहीं दी गई थी।

v. 30 अप्रैल 2009 को, शिकायतकर्ता ने अपीलार्थी और अग्रवाल को एक कानूनी नोटिस संबोधित किया जिसमें आरोप लगाया गया कि संबंधित अधिकारियों को दिए गए शिकायत के उपरोक्त चार पत्रों की सामग्री मानहानिकारक थी। उल्लेखनीय है कि 20 मई 2009 को अपीलार्थी ने अन्य बातों के साथ-साथ कानूनी नोटिस का जवाब देते हुए कहा कि उसने अग्रवाल को ऐसा कोई पत्र लिखने के लिए अधिकृत नहीं किया था और अपीलार्थी भी उनकी तैयारी में शामिल नहीं था।

vi. यह इस संदर्भ में था कि शिकायतकर्ता ने निचली अदालत के समक्ष आपराधिक मानहानि के साथ-साथ आरोपी के खिलाफ आईपीसी की धारा 107, 499 और 500 के साथ धारा 34 के तहत इसके लिए उकसाने का आरोप लगाते हुए शिकायत दर्ज कराई थी।

vii. निचली अदालत ने शिकायत पर गौर करने और उसके समर्थन में गवाहों से पूछताछ करने के बाद आरोपी को तलब करने का आदेश दिया क्योंकि यह राय थी कि उनके खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया था।

viii. समन आदेश के लिए अपीलार्थी द्वारा चुनौती को उच्च न्यायालय ने विवादित आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया था।

आवेदन की सामग्री

4. अपीलार्थी की ओर से विद्वान वकील सुश्री विश्वनाथन ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने न्याय की गंभीर विफलता को अंजाम दिया है।

5 डब्ल्यूपी (सी) No.6155/2008 227

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 228

एक गुप्त आदेश द्वारा याचिका को खारिज करना। उन्होंने तर्क दिया कि अपीलार्थी द्वारा याचिका में कानून के कई महत्वपूर्ण सवाल उठाए गए थे। हालाँकि इस आधार पर कि क्या कोई कंपनी इस आधार पर मुकदमा चलाने में सक्षम है कि क्या वह आवश्यक पुरुष अधिकार रखने में असमर्थ है, इस आपत्ति का उत्तर विद्वान न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णयों द्वारा दिया गया था, फिर भी, उनके अनुसार, विद्वान न्यायाधीश को अपीलार्थी द्वारा उठाई गई अन्य आपत्तियों पर विचार करना चाहिए था। इस पर विचार नहीं करने के बाद, यह आग्रह किया गया कि विवादित आदेश अक्षम्य है।

5. सुश्री विश्वनाथन ने अपील के समर्थन में निम्नलिखित विशिष्ट तर्क उठाए:

आई. विद्वान न्यायाधीश के विवादित आदेश में यह विचार करना छोड़ दिया गया कि शिकायत में अपीलार्थी द्वारा बोले गए या लिखे गए किसी भी मौखिक या लिखित शब्द का खुलासा नहीं किया गया था, या उसके द्वारा किए गए संकेत या दृश्य प्रतिनिधित्व का खुलासा नहीं किया गया था; और, अपीलार्थी द्वारा लगाए गए किसी भी आरोप के प्रकटीकरण के अभाव में, मानहानि के अपराध का प्रमुख घटक मौजूद नहीं था। विद्वत न्यायाधीश का विवादित आदेश यह समझने में विफल रहा कि पावर ऑफ अटॉर्नी जारी करना कानून द्वारा आई. पी. सी. की धारा 499 के तहत एक घटक नहीं हो सकता है क्योंकि भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 की धारा 188 के तहत एजेंट केवल वैध कार्य करने के लिए अधिकृत हैं और इसके परिणामस्वरूप, इस तरह के पावर ऑफ अटॉर्नी का निष्पादन अग्रवाल को मानहानि का कोई भी कथित कार्य करने के लिए दिए गए प्राधिकरण या सहमति के बराबर नहीं है।

ii. विद्वान न्यायाधीश ने इस बात पर विचार न करने में गलती की कि अपीलार्थी की ओर से शुरू की गई रिट याचिका आई. पी. सी. की धारा 499 के तहत अपराध का एक घटक नहीं हो सकती है, क्योंकि दीवानी मामलों में पेश किए गए दस्तावेज "पूर्ण विशेषाधिकार" द्वारा संरक्षित हैं और आई. पी. सी. की धारा 499 के चौथे अपवाद के तहत भी आते हैं।

iii. न्याय की घोर विफलता रही है कि विद्वान न्यायाधीश को निचली अदालत के बिना आरोपी के खिलाफ प्रक्रिया जारी करने में निचली अदालत द्वारा की गई स्पष्ट त्रुटि को ठीक करना चाहिए था, यह विचार करते हुए कि क्या आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवादों में से कोई भी तथ्यों पर और वर्तमान मामले की परिस्थितियों में लागू था।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

iv. विद्वान न्यायाधीश का विवादित आदेश यह समझने में विफल रहता है कि क्यों

राजेन्द्र कुमार सीताराम पांडे में इस न्यायालय का निर्णय

v. उत्तम 6 का पालन नहीं किया गया, जिसके द्वारा कानून का निपटारा किया गया है कि एक मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 499, आई. पी. सी. के अपवादों को लागू किए बिना प्रक्रिया जारी करना अनुचित, अत्यधिक और स्पष्ट रूप से गलत है जिसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता होती है।

v. अरुण पुरी बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली राज्य 7 में निर्णय था

इस प्रस्ताव के लिए यह भी उद्धृत किया गया है कि कोई कठोर सिद्धांत नहीं है कि अपवाद का लाभ केवल परीक्षण के चरण में ही निर्धारित किया जा सकता है।

6. उपरोक्त दलीलों पर विराम लगाते हुए, सुश्री विश्वनाथन ने प्रार्थना की कि शिकायत से उत्पन्न कार्यवाही को रद्द कर दिया जाए।

7. श्री तनेजा, शिकायतकर्ता का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील ने विशेष अनुमति याचिका के प्रति उनके जवाबी हलफनामे के हिस्से के रूप में विभिन्न दस्तावेजों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। उनके अनुसार, अपीलार्थी ने इस न्यायालय से प्रासंगिक सामग्री को रोक दिया और 29 अप्रैल 2011 को एक अग्रिम आदेश के रूप में एक एकतरफा अंतरिम आदेश प्राप्त किया, जिसमें निचली अदालत के समक्ष पूरी कार्यवाही को रोक दिया गया है।

8. हमारा नोटिस सबसे पहले इस तथ्य पर आमंत्रित किया गया था कि अग्रवाल ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत याचिका 8 पेश करके दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष समन आदेश को स्वतंत्र रूप से चुनौती दी थी। पीसी। 10 दिसंबर 2010 के एक विस्तृत आदेश द्वारा, उसी विद्वान न्यायाधीश (जिन्होंने अपीलार्थी की याचिका को खारिज कर दिया था) ने उल्लेख किया कि अग्रवाल आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवादों के तहत बचाव कर रहे थे और यह कि "न्यायालय इस मामले को नहीं ले सकता है।

समन आदेश को रद्द करने के लिए याचिकाकर्ता का बचाव या

शिकायत को रद्द करें। "इस तरह के निर्णय के आधार पर, विद्वान न्यायाधीश ने चुनौती को खारिज कर दिया।

9. श्री तनेजा ने तर्क दिया कि विद्वान न्यायाधीश ने 10 दिसंबर 2010 को अग्रवाल और अपीलार्थी की याचिकाओं पर विचार किया था।

6 (1999) 3 एससीसी 134

7 2022 (15) स्केल 541 8 सीआरएल। एम. सी. 3350/2010 229

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 230

दूसरा; और, यद्यपि यह सत्य है कि विद्वान न्यायाधीश ने अपीलार्थी की याचिका को खारिज करते समय इस मुद्दे पर विचार किया कि इरिडियम इंडिया टेलीकॉम लिमिटेड (उपरोक्त) और मॉर्गन टेक्नोलॉजिक्स लिमिटेड (उपर्युक्त) को ध्यान में रखते हुए एक कंपनी के खिलाफ कार्रवाई की जा सकती है और उसमें उठाए गए अन्य आधारों पर विवादित आदेश को अपीलार्थी की चुनौती को अस्वीकार करने के लिए अलग-अलग कारण नहीं बताए, लेकिन जब अग्रवाल की याचिका पर विचार किया गया तो अपीलार्थी का विधिवत प्रतिनिधित्व उसके विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया था और उसकी उपस्थिति में, बर्खास्तगी का आदेश निर्देशित किया गया था। श्री तनेजा ने जिस बात का संकेत दिया वह यह था कि विद्वान न्यायाधीश ने समन आदेश के लिए अग्रवाल की चुनौती को खारिज करते हुए एक तर्कपूर्ण आदेश पारित किया था, विद्वान न्यायाधीश ने अपीलार्थी की याचिका को खारिज करते समय दो बार कारणों को दोहराना आवश्यक नहीं समझा होगा।

10. इसके बाद, श्री तनेजा ने विभिन्न सार्वजनिक प्राधिकरणों के समक्ष अग्रवाल द्वारा जारी शिकायत पत्रों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। यह तर्क दिया गया कि अपीलार्थी की ओर से और उसके निर्देशों के तहत कार्य करते हुए, अग्रवाल ने शिकायतकर्ता के खिलाफ मानहानि के रूप में लापरवाह और तुच्छ आरोप लगाए थे और इस प्रक्रिया में, जनता की नजर में उनकी प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि को कम किया था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि अपीलकर्ता अग्रवाल द्वारा जारी शिकायत पत्रों के बारे में अनभिज्ञता का नाटक नहीं कर सकता है। दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत अपीलार्थी की रिट याचिका का उल्लेख करते हुए, उन्होंने बताया कि अग्रवाल द्वारा जारी किए गए स्वयं-शिकायत पत्रों को निविदा प्रक्रिया के दौरान अपीलार्थी की अयोग्यता को चुनौती देते हुए ऐसी याचिका का हिस्सा बनाया गया था; और, यदि वास्तव में, ऐसे पत्र अपीलार्थी की जानकारी और सहमति के बिना जारी किए गए थे, तो यह तर्क की अवहेलना करता है कि उन्हें पहले स्थान पर रिट याचिका का हिस्सा क्यों बनाया गया था जहां अपीलार्थी को रिट याचिकाकर्ता के रूप में प्रस्तुत किया गया था।

11. सुप्रिया जैन बनाम हरियाणा राज्य 9 में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए, श्री तनेजा द्वारा यह तर्क दिया गया कि अभियुक्त द्वारा रखी गई अतिरिक्त सामग्री के आधार पर शिकायत को रद्द करने के लिए न्यायालयों के लिए यह खुला नहीं है जो नीचे दिए गए न्यायालय के समक्ष कार्यवाही के रिकॉर्ड का हिस्सा नहीं है। उनके अनुसार, पावर ऑफ अटॉर्नी सबूत का एक टुकड़ा नहीं है जिसे शिकायतकर्ता द्वारा स्वीकार या स्वीकार किया गया है और इस प्रकार, यह आवश्यक है

9 (2023) एससीसी ऑनलाइन एससी 765

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

अपीलार्थी द्वारा प्रमाण। चूंकि यह अभी तक कानून के अनुसार अपीलार्थी द्वारा साबित नहीं किया गया है, इसलिए इस न्यायालय द्वारा इस स्तर पर इस पर विचार नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, यह अपीलार्थी पर है कि वह समन का जवाब दे और निचली अदालत के समक्ष पेश होकर उसके लिए जो भी बचाव उपलब्ध हो, उसे उठाए। 12. श्री तनेजा द्वारा कई निर्णयों पर भी रिलायंस को रखा गया था, जिनमें से कुछ का हम थोड़ी देर बाद उल्लेख करने का प्रस्ताव करते हैं, ताकि उनके इस तर्क को पुष्ट किया जा सके कि अपीलार्थी की याचिका सही ढंग से खारिज की गई थी और अपील लागत के साथ खारिज होने योग्य है।

सवाल

13. अपीलार्थी और शिकायतकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को सुनने के बाद और अभिलेख पर सामग्री पर विचार करने पर, हमारा विचार है कि कानून के निम्नलिखित प्रश्न उत्तर के लिए उभरते हैं:

आई. मानहानि का आरोप लगाने वाली एक निजी शिकायत पर विचार करते समय, क्या मजिस्ट्रेट को अभियुक्त को बुलाने से पहले केवल याचिका का हिस्सा बनने वाले आरोपों के बारे में खुद को स्वीकार करना चाहिए या वह आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवादों पर अपने न्यायिक दिमाग को लागू करते हुए शिकायत को यह मानते हुए खारिज कर सकता है कि कथित तथ्य मानहानि का मामला नहीं बनाते हैं?

और

ii. क्या और, यदि बिल्कुल भी हो, तो यह उच्च न्यायालयों के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 द्वारा सहेजी गई अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करने के लिए खुला है। पी. सी. आई. पी. सी. की धारा 499 के किसी भी अपवाद का लाभ बढ़ाने पर समन आदेश को दरकिनार करके मानहानि की कार्यवाही को रद्द करेगा?

14. उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर देने के बाद, हम अपील के तथ्यों और परिस्थितियों से उत्पन्न निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर देना चाहते हैं: ए। क्या अपीलार्थी ने चुनौती के तहत मजिस्ट्रेट और विद्वान न्यायाधीश के न्यायिक आदेशों में हस्तक्षेप के लिए कोई मामला बनाया है?

बी। क्या किसी कंपनी पर मानहानि का मुकदमा चलाया जा सकता है जब कथित मानहानिकारक बयान उसके (कंपनी) द्वारा नहीं बल्कि उसके अधिकृत एजेंट द्वारा दिए जाते हैं?

231

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 232

ग. उपरोक्त उत्तरों के आधार पर, क्या आई. पी. सी. की धारा 499 के चौथे अपवाद का लाभ, जैसा कि दावा किया गया है, अपीलार्थी को दिया जाना चाहिए?

विश्लेषण

15. इस न्यायालय के जिन निर्णयों का उल्लेख किया गया था और उद्धृत निर्णयों में उल्लिखित निर्णयों के साथ-साथ कुछ अन्य निर्णयों का सर्वेक्षण, जिन्हें हमें इस निर्णय को तैयार करते समय पढ़ने और विचार करने का अवसर मिला था, मार्गदर्शन प्रदान करेगा और हमारे लिए इस अपील के भाग्य का निर्णय करने का मार्ग प्रशस्त करेगा। 16. हम सबसे पहले पक्षों द्वारा उद्धृत निर्णयों पर विचार करेंगे और उन निर्णयों का, हालांकि उनके द्वारा उद्धृत नहीं किया गया है, उनके मूल के अनुक्रम को बनाए रखते हुए, ऐसे निर्णयों में पता लगाया जा सकता है।

17. बलराज खन्ना और ओआरएस बनाम मोती राम 10, प्रतिवादी ने एक याचिका दायर की प्रथम अपीलार्थी और 6 (छह) अन्य लोगों के खिलाफ आई. पी. सी. की धारा 500 के तहत शिकायत, जिसमें आरोप लगाया गया था कि उन्होंने उसके खिलाफ ऐसे आरोप लगाए थे जो चरित्र में मानहानिकारक थे। 2 (दो) आधारों पर मजिस्ट्रेट ने शिकायत को खारिज कर दिया। प्रत्यर्थी ने अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के समक्ष बर्खास्तगी के आदेश के संशोधन के लिए असफल आवेदन किया, जिसके बाद उन्होंने सफलता के साथ दिल्ली उच्च न्यायालय का दरवाजा

खटखटाया। उच्च न्यायालय ने विवादित आदेशों को दरकिनार करते हुए आगे की जांच का निर्देश दिया। विभिन्न विदेशी निर्णयों के साथ-साथ उड़ीसा, नागपुर, इलाहाबाद और मैसूर के उच्च न्यायालयों के उन निर्णयों पर विचार करने के बाद, जिन्हें उद्धृत किया गया था, इस न्यायालय ने पैराग्राफ 29 में निम्नलिखित निर्णय दिया:

“29. चर्चा को समाप्त करने से पहले, यह कहा जाना चाहिए कि ट्रायल मजिस्ट्रेट ने शिकायत को खारिज करने के लिए एक अतिरिक्त कारण दिया है। इसका कारण यह है कि 11 दिसंबर, 1964 को स्थायी समिति द्वारा पारित प्रस्ताव और उससे पहले अपीलार्थियों सहित स्थायी समिति के सदस्यों द्वारा की गई चर्चा आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवादों के दायरे में आती है। दुर्भाग्य से, उच्च न्यायालय ने भी इस पहलू को छुआ है और कुछ टिप्पणियां की हैं। हमारी राय में, आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवादों को लागू करने का सवाल इस स्तर पर नहीं उठता है। मजिस्ट्रेट द्वारा शिकायत को दूसरे आधार पर अस्वीकार करना।

10 (1971) 3 एस. सी. सी. 399

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

ऊपर वर्णित को कायम नहीं रखा जा सकता है। उच्च न्यायालय के लिए इस पहलू पर विचार करना भी अनावश्यक था और ट्रायल मजिस्ट्रेट से अलग था। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवादों के साथ-साथ अपीलार्थियों के लिए उपलब्ध अन्य सभी बचावों को लागू करने के सवाल पर शिकायत के मुकदमे के दौरान गौर करना होगा।”

(हमारा रेखांकित करना, जोर देने के लिए)

18. अगला निर्णय सेवाक्रम सोभानी बनाम आर. के. करंजिया 11 है।

3 (तीन) माननीय न्यायाधीशों की पीठ द्वारा प्रस्तुत। अपील का निर्देश मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए पारित एक आदेश के खिलाफ दिया गया था। पी. सी., वैकल्पिक रूप से इसकी धारा 482 के तहत। प्रतिवादी मुख्य संपादक, ब्लिट्ज़ थे। उसमें एक लेख प्रकाशित किया गया था जो स्वयं मानहानिकारक था। आई. पी. सी. की धारा 500 के तहत शुरू किए गए अभियोजन को विवादित आदेश द्वारा रद्द कर दिया गया था।

इस आधार पर कि मामला "स्पष्ट रूप से भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 499 के अपवाद 9 के दायरे में आता है।" अपील की अनुमति दी गई थी

बहुमत और चुनौती के तहत आदेश रद्द कर दिया गया। माननीय ए. पी. सेन, जे. के माध्यम से बोलते हुए न्यायालय ने यही कहा:

“6. संहिता की धारा 482 के तहत अभियोजन को रद्द करने वाला उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज आदेश पूरी तरह से विकृत है और इसके परिणामस्वरूप न्याय की स्पष्ट विफलता हुई है। उच्च न्यायालय ने अभियुक्त व्यक्तियों के मुकदमे के बिना पूरे मुद्दे को पूर्वनिर्धारित किया है। मामला संहिता की धारा 251 के तहत आरोपी व्यक्तियों की याचिका दर्ज करने के चरण में था। धारा 251 की आवश्यकताओं का अभी भी पालन किया जाना बाकी है। विद्वान मजिस्ट्रेट को यह पता लगाना था कि क्या प्रतिवादी आरोप को स्वीकार करता है या मुकदमा चलाने की मांग करता है। सामने लाई गई परिस्थितियों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रतिवादी संहिता की धारा 500 के तहत दंडनीय मानहानि का प्रथम दृष्टया दोषी था, जब तक कि वह संहिता की धारा 499 के अपवादों में से किसी एक का अनुरोध नहीं करता है।***

यह प्रत्यर्थी का अनुरोध है कि उसे दंड संहिता की धारा 499 के नौवें अपवाद के तहत संरक्षण दिया गया था। यह साबित करने का बोझ, जैसे कि यह है कि उसका मामला उस अपवाद के भीतर आएगा, उस पर है।***

11 (1981) 3 एससीसी 208 233

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 234

7. हम उन कारणों को समझने में पूरी तरह से विफल हैं जिन्होंने उच्च न्यायालय को कार्यवाही को रद्द करने के लिए प्रेरित किया।***”

माननीय ओ. चिन्नाप्पा रेड्डी, जे. ने एक सहमति वाले निर्णय में एक उज्ज्वल चर्चा की जो इस अपील के तथ्यों को छूते हुए हमारे द्वारा तैयार किए गए प्रश्नों में से एक का उत्तर देने के लिए भी प्रासंगिक होगी। हम उनके प्रभुता के निर्णय के समापन अनुच्छेद को इस प्रकार उद्धृत करते हैं: “18. यदि नौवें अपवाद को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू किया जाना है तो विचार के लिए कई प्रश्न उत्पन्न होते हैं। क्या लेख उचित सावधानी और ध्यान देने के बाद प्रकाशित किया गया था? क्या लेख के लेखक ने खुद को संतुष्ट किया कि यह मानने के लिए उचित आधार थे कि उनके द्वारा लगाए गए आरोप सही थे? क्या उन्होंने उचित सावधानी और जिम्मेदारी और औचित्य की भावना के साथ काम किया? क्या लेख पूरी तरह से उप सचिव की रिपोर्ट पर आधारित था या लेखक के सामने कोई अन्य सामग्री थी? रिपोर्ट की प्रामाणिकता और इसकी सामग्री के बारे में खुद को संतुष्ट करने के लिए लेखक ने क्या कदम उठाए? क्या सत्यापन के किसी भी प्रयास के बिना आरोप जल्दबाजी में लगाए गए थे? क्या आरोप किसी व्यक्तिगत दुर्भावना या द्वेष का परिणाम था जो लेखक ने शिकायतकर्ता के प्रति किया था? क्या यह किसी दुर्भावना या द्वेष का परिणाम था जो लेखक ने उस राजनीतिक समूह के प्रति किया था जिससे शिकायतकर्ता संबंधित था? क्या लेख का उद्देश्य केवल शिकायतकर्ता या उस पक्ष को बदनाम करना और बदनाम करना था जिससे वह संबंधित था? क्या लेख का उद्देश्य जेल प्रशासन की सड़ांध को उजागर करना था जिसने पुरुष और महिला बंदियों के बीच स्वतंत्र यौन संपर्क की अनुमति दी थी? क्या लेख का उद्देश्य उन व्यक्तियों के घृणित चरित्र को उजागर करना था जो

संत नेताओं के रूप में गुजर रहे थे?क्या लेख का उद्देश्य केवल उन पाठकों के लिए अपमानजनक पठन सामग्री प्रदान करना था जिन्हें घोटालों के लिए एक विशिष्ट स्वाद था?ये और कई अन्य प्रश्न विचार के लिए उत्पन्न हो सकते हैं, जो मुकदमे में अभियुक्त द्वारा लिए गए रुख और शिकायतकर्ता द्वारा बचाव पक्ष को ध्वस्त करने के प्रस्ताव पर निर्भर करता है।निश्चित रूप से इन प्रश्नों को तय करने का चरण अभी तक नहीं आया है।अभियुक्त की याचिका दर्ज होने से पहले ही, इस स्तर पर इन प्रश्नों के उत्तर केवल एक प्राथमिक निष्कर्ष हो सकते हैं।“सद्भावना' और 'सार्वजनिक भलाई', जैसा कि हमने कहा, तथ्य के प्रश्न हैं और साक्ष्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। इसलिए मुकदमा चलता रहना चाहिए।”

(हमारा रेखांकित करना, जोर देने के लिए)

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

19. 3 (तीन) माननीय न्यायाधीशों की एक अन्य पीठ का निर्णय

शत्रुघ्न प्रसाद सिन्हा बनाम राजाभाउ सूरजमल रथू 12 ने रेखांकित किया

मानहानि के लिए शिकायत को रद्द करने के लिए अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के लिए रूपरेखा। पैराग्राफ 13 प्रासंगिक होने के कारण नीचे दिया गया है:

“13. जहां तक नासिक में न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी के न्यायालय के नेतृत्व में शिकायत में अपीलार्थी के खिलाफ लगाए गए आरोपों का संबंध है, शिकायत को पढ़ने पर हमें नहीं लगता कि हम इस स्तर पर उस शिकायत को रद्द करने के लिए न्यायसंगत होंगे।यह इस न्यायालय का प्रांत नहीं है जो इस स्तर पर बयान के साक्ष्य या दायरे और अर्थ की सराहना करे।कुछ आरोप लगाए गए लेकिन क्या ये आरोप एक व्यापारी वर्ग के रूप में मारवाड़ी समुदाय की मानहानि का गठन करते हैं और क्या अपीलार्थी का इरादा समुदाय के बीच सामान्य भावना के उदाहरण के रूप में उद्धृत करने का था और क्या जिस संदर्भ में उक्त बयान दिया गया था, जैसा कि अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा तर्क दिया जाना चाहिए, वे सभी मामले हैं जिन पर बाद के चरण में विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा विचार किया जाना है।इस स्तर पर, हम साक्ष्य का वजन करना शुरू नहीं कर सकते हैं और यह निर्धारित करने के लिए किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकते हैं कि शिकायत में लगाए गए आरोप धारा 500 के तहत दंडनीय हैं या नहीं।यह एक तय कानूनी स्थिति है कि एक अदालत को शिकायत को समग्र रूप से पढ़ना होगा और यह पता लगाना होगा कि क्या प्रकट किए गए आरोप मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 499 के तहत सुनवाई योग्य नहीं हैं।मजिस्ट्रेट प्रथम दृष्टया इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि आरोप आई. पी. सी. की धारा 499 के तहत 'मानहानि' की अवहेलना के दायरे में आ सकते हैं और इसका संज्ञान लिया जा सकता है। लेकिन ये मुकदमे में स्थापित किए जाने वाले तथ्य हैं।अपीलार्थी द्वारा स्थापित किया गया मामला या तो बचाव करने के लिए खुला है या मुकदमे में आरोप तैयार करने के लिए अन्य कदम

हैं जो कानून को ज्ञात किसी भी स्तर पर हों। प्रथम दृष्टया हम सोचते हैं कि इस स्तर पर यह नासिक में न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी के न्यायालय के नेतृत्व में शिकायत को रद्द करने का मामला नहीं है। उस हद तक, उच्च न्यायालय आई. पी. सी. की धारा 500 के तहत शिकायत को रद्द करने से इनकार करने में सही था।

(हमारा रेखांकित करना, जोर देने के लिए)

12 (1996) 6 एससीसी 263 235

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 236

20. इसके बाद एम. एन. दमानी बनाम एस. के. सिन्हा 13 आया, जिसके बाद यह न्यायालय सेवाक्रम सोभानी (ऊपर) और शत्रुघ्न प्रसाद सिन्हा (ऊपर) में निर्धारित कानून को लागू करते हुए, कर्नाटक उच्च न्यायालय के आदेश को दरकिनार कर दिया और आई. पी. सी. की धारा 500 के तहत अभियुक्त को समन जारी करने वाले मजिस्ट्रेट के आदेश को बहाल कर दिया।

21. एम. ए. रुमुगम बनाम किट्टू उपनाम कृष्णमूर्ति 14 में, प्रतिवादी

एफ. आई. ने अपीलार्थी के खिलाफ आई. पी. सी. की धारा 500 के तहत मानहानि के अपराध के लिए एक निजी शिकायत का नेतृत्व किया। उक्त शिकायत का संज्ञान लेते हुए मजिस्ट्रेट ने अपीलार्थी को समन जारी किया। इससे व्यथित होकर, उन्होंने मद्रास में उच्च न्यायालय के समक्ष एक याचिका का नेतृत्व किया जिसमें प्रतिवादी के नेतृत्व में शिकायत याचिका से संबंधित रिकॉर्ड मांगने और उसे रद्द करने का अनुरोध किया गया था। उच्च न्यायालय के समक्ष, यह तर्क दिया गया था कि घटनाओं की पृष्ठभूमि और जिस तरीके से शिकायत याचिका को अपीलार्थी के नेतृत्व में दायर किया जाना था, वह स्पष्ट रूप से स्थापित करेगा कि उसकी ओर से की गई कार्रवाई सद्भावना में नहीं थी। उक्त तर्क को उच्च न्यायालय ने अस्वीकार कर दिया था। इस न्यायालय के पास दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के प्रावधानों की प्रयोज्यता पर विचार करने का अवसर था। आई. पी. सी. की धारा 500 के तहत अपीलार्थी के खिलाफ प्रत्यर्थी के नेतृत्व में एक शिकायत याचिका को रद्द करने के लिए पी. सी. अपील को खारिज करते हुए, न्यायालय ने कानून के सुव्यवस्थित सिद्धांत को लागू किया कि जो लोग अपवाद का अनुरोध करते हैं, उन्हें इसे साबित करना चाहिए और इसलिए, इस बात के प्रमाण का भार कि उनकी कार्रवाई प्रामाणिक थी, केवल अपीलार्थी पर ही होगा।

22. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम भारत संघ 15 में, इस न्यायालय ने विचार किया

एक अलग कोण से मुद्दा। हम इस विवाद को पुनः प्रस्तुत करने से बेहतर कुछ नहीं कर सकते हैं और कैसे इसे निम्नलिखित शब्दों में बिना किसी हिचकिचाहट के दूर किया गया था:

“209. हम अपने कर्तव्य में विफल होंगे यदि हम विद्वान वरिष्ठ वकील श्री भंभानी के निवेदन पर ध्यान नहीं देते हैं। विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया जाता है कि अभियुक्त को बुलाए

जाने के समय धारा 499 के अपवादों पर विचार किया जाना आवश्यक है, लेकिन चूंकि प्रावधान में इसकी कल्पना नहीं की गई है, इसलिए यह असंवैधानिक है। यह कानून की स्थिर स्थिति है कि जो लोग अपवाद का अनुरोध करते हैं, उन्हें इसे साबित करना होगा। यह.

13 (2001) 5 एससीसी 156 14 (2009) 1 एससीसी 101 15 (2016) 7 एससीसी 221

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

एम. ए. रुमुगम में यह निर्धारित किया गया है कि किसी भी मामले को आई. पी. सी. की धारा 499 से जुड़े आठवें और नौवें अपवाद के दायरे में लाने के उद्देश्य से, अपवाद का अनुरोध करने वाले व्यक्ति के लिए इसे साबित करना आवश्यक होगा। उसे इसे बनाने वाले व्यक्ति या किसी अन्य व्यक्ति के हितों की रक्षा के उद्देश्य से या सार्वजनिक भलाई के लिए सद्भावना साबित करनी होगी। उक्त प्रस्ताव निश्चित रूप से किसी भी अपवाद पर लागू होगा जो इसका लाभ लेना चाहता है। इसलिए, यह तर्क कि यदि उक्त अपवाद को समन जारी करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए, तो यह स्थापित आपराधिक न्यायशास्त्र के विपरीत होगा और इसलिए, यह रुख कि इसे ध्यान में नहीं रखा जा सकता है, इस प्रावधान को अनुचित बनाता है, पूरी तरह से अस्थिर है और एक तरह से अस्थिर है। और हम बिना किसी हिचकिचाहट के इसका विरोध करते हैं।”

(हमें रेखांकित करते हुए, जोर देने के लिए) 23। अब, हम सुश्री द्वारा उद्धृत पहले निर्णय पर विचार करते हैं।

विश्वनाथन, अर्थात्, राजेंद्र कुमार सीताराम पांडे (ऊपर)। तथ्यों,

प्रासंगिक मुद्दा और अंतिम निर्णय-सभी को पैराग्राफ 7 में दर्ज किया गया है, जिसे हम यहां पुनः प्रस्तुत करते हैं:

“अगला प्रश्न जो विचार के लिए उत्पन्न होता है वह यह है कि क्या धारा 201 की उप-धारा (1) के तहत मजिस्ट्रेट के आदेश के अनुसार प्राप्त शिकायत और कोषागार अधिकारी की रिपोर्ट को पढ़ना, क्या यह कहा जा सकता है कि प्रथम दृष्टया मुकदमा चलाने के लिए मामला मौजूद है या धारा 499 का अपवाद 8 स्पष्ट रूप से लागू होता है और परिणामस्वरूप ऐसे मामले में आरोपी को मुकदमे का सामना करने के लिए कहना न्याय का उपहास होगा। शिकायत याचिका में आरोपों की गंभीरता यह है कि अभियुक्त व्यक्तियों ने ट्रेजरी ऑफिसर, अमरावती को शिकायत की, जिसमें इस आशय के झूठे आरोप लगाए गए कि शिकायतकर्ता नशे की हालत में ऑफिसर आया था और ट्रेजरी ऑफिसर, अतिरिक्त ट्रेजरी ऑफिसर और कलेक्टर को गाली दी थी और ऑफिसर में अश्लील भाषा का उपयोग करके प्रसारित किया गया था और इस तरह के आरोप शिकायतकर्ता की प्रतिष्ठा और सेवाओं को नुकसान पहुंचाने के इरादे से लगाए गए थे। इस कथन की शुद्धता का निर्णय करने के लिए, मजिस्ट्रेट ने प्रक्रिया जारी करने के बजाय कोषागार

कार्यालय से एक जांच करने और एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए कहा था और उक्त कोषागार कार्यालय ने मजिस्ट्रेट को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। विचार के लिए सवाल यह है कि क्या 237

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 238

मजिस्ट्रेट की रिपोर्ट के साथ पढ़ी गई शिकायत में लगाए गए आरोप धारा 500 के तहत अपराध बताते हैं या नहीं। दंड संहिता, 1860 की धारा 499 मानहानि के अपराध की अवहेलना करती है और धारा 500 इस तरह के अपराध के लिए सजा प्रदान करती है। धारा 499 का अपवाद 8 स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि आरोप के विषय के संबंध में उस व्यक्ति पर वैध अधिकार रखने वाले किसी भी व्यक्ति के खिलाफ सद्भावना से आरोप लगाना मानहानि नहीं है। कोषागार कार्यालय की रिपोर्ट स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि शिकायतकर्ता के खिलाफ अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा दी गई रिपोर्ट के अनुसार, एक विभागीय जांच शुरू की गई थी और शिकायतकर्ता को दोषी पाया गया था। ऐसी परिस्थितियों में यह तथ्य कि अभियुक्त व्यक्तियों ने शिकायतकर्ता के वरिष्ठ अधिकारी को एक रिपोर्ट दी थी, जिसमें आरोप लगाया गया था कि उसने नशे की हालत में कोषागार कार्यालय का दुरुपयोग किया था, जो वर्तमान शिकायत की गंभीरता है और इससे अधिक कुछ नहीं, दंड संहिता, 1860 की धारा 499 के अपवाद 8 द्वारा कवर किया जाएगा। शिकायत याचिका में लगाए गए आरोपों पर गौर करने से हमें यह भी संतोष होता है कि मानहानि का कोई मामला सामने नहीं आया है। मामले के इस दृष्टिकोण में, अभियुक्त व्यक्तियों को मुकदमे का सामना करने या प्रक्रिया जारी करने के प्रश्न पर पुनर्विचार के लिए नए सिरे से मजिस्ट्रेट से संपर्क करने की आवश्यकता न्याय के हित में नहीं होगी। दूसरी ओर, हमारी सुविचारित राय में, यह प्रक्रिया जारी करने के आदेश और स्वयं कार्यवाही को रद्द करने का मामला है। इसलिए, हम उच्च न्यायालय के विवादित आदेश को दरकिनार करते हैं और विद्वान सत्र न्यायाधीश के आदेश को स्वीकार करते हैं और आपराधिक कार्यवाही को ही रद्द कर देते हैं। इस अपील की अनुमति है।”

(हमारा उल्लेख करते हुए, जोर देने के लिए) 24। उपरोक्त निर्धारण से यह स्पष्ट होता है कि शिकायत की याचिका में लगाए गए आरोपों के अवलोकन पर, न्यायालय को संतुष्ट किया गया था कि इसमें मानहानि का कोई मामला नहीं बनाया गया था और ठीक यही कारण प्रतीत होता है कि न्यायालय ने महसूस किया कि यह न्याय के हित में नहीं होगा कि अभियुक्त व्यक्तियों को मुकदमे का सामना करना पड़े या यहां तक कि प्रक्रिया जारी करने के प्रश्न पर पुनर्विचार के लिए नए सिरे से मजिस्ट्रेट से संपर्क करना पड़े। हम राजेंद्र कुमार सीताराम पांडे (उपरोक्त) में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित किसी भी कानून को नहीं पढ़ते हैं कि जहां भी मानहानि की शिकायत पर पारित समन आदेश को चुनौती दी जाती है, वहां उच्च न्यायालयों के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत याचिका दायर की जाती है। पी. सी. या ऐसी चुनौती इस न्यायालय में जाती है,

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

एक प्रयास अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए कि क्या कोई भी अपवाद आकर्षित किया गया है ताकि अभियुक्त को लंबे समय तक चलने वाली कार्यवाही के अधीन किए बिना कार्यवाही बंद की जा सके। अधिक से अधिक, हम निर्णय को उस रूप में पढ़ते हैं, जहां दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में, न्यायालय ने महसूस किया कि अपीलार्थियों को मुकदमे से गुजरने की आवश्यकता न्याय का उपहास होगी; इसलिए, निर्णय को मामले के तथ्यों के अनुरूप माना जाना चाहिए।

25. अब समय आ गया है कि सुश्री विश्वनाथन, अर्थात् अरुण पुरी (उपरोक्त) द्वारा लिए गए दूसरे निर्णय पर विचार किया जाए। इस तरह के निर्णय में,

जवाहरलाल दर्डा बनाम मनोहरराव गणपतराव कापसीकर **16** पर विचार किया गया।

इससे पहले कि हम अरुण पुरी (ऊपर) पर गौर करें, हम यह पता लगाने का प्रस्ताव करते हैं कि क्या जवाहरलाल दर्डा (ऊपर) एक बाध्यकारी मिसाल के बल के साथ एक कानून निर्धारित करता है।

26. जवाहरलाल दर्डा (ऊपर) के निर्णय से पता चलता है कि प्रत्यर्थी 1 ने 2 फरवरी, 1987 को संबंधित मजिस्ट्रेट की अदालत में एक शिकायत का नेतृत्व किया था, जिसमें आरोप लगाया गया था कि 4 फरवरी, 1984 को अपने समाचार पत्र 'डेली लोकमत' में एक समाचार प्रकाशित करके, अपीलकर्ता उस दैनिक का तत्कालीन मुख्य संपादक था और 4 (चार) किसी न किसी रूप में समाचार पत्र से जुड़े अन्य लोगों ने आई. पी. सी. की धारा 34 के साथ पठित धारा 499, 500, 501 और 502 के तहत दंडनीय अपराध किए थे। मजिस्ट्रेट द्वारा सभी अभियुक्तों के खिलाफ प्रक्रिया जारी की गई थी। इस तरह के आदेश को चुनौती दिए जाने पर, संबंधित सत्र न्यायालय ने इस राय को खारिज कर दिया कि उस समाचार को प्रकाशित करके, किसी भी आरोपी ने कोई अपराध नहीं किया था। उस आदेश को शिकायतकर्ता ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर करके चुनौती दी थी। पीसी। उच्च न्यायालय की राय थी कि सत्र न्यायालय ने प्रकाशन की गलत व्याख्या की है। यह भी विचार था कि जब मजिस्ट्रेट ने अभियुक्त के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला पाया था और सोचा था कि यह प्रक्रिया जारी करना उचित नहीं है, तो सत्र न्यायालय के लिए पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग करके उस आदेश को रद्द करना उचित नहीं था। इस न्यायालय ने सत्र न्यायालय के आदेश को निम्नानुसार पुनर्स्थापित किया:

“4. जैसा कि हमने पहले कहा है, यह समाचार 4-4-1984 को प्रकाशित हुआ था। उस ओर से शिकायत का नेतृत्व शिकायतकर्ता ने 2-2-1987 पर किया था। समाचार में केवल यह खुलासा किया गया कि 13-12-1983 पर विधानसभा में हुई बहस के दौरान क्या हुआ। इसमें कहा गया है

जब मजालगांव और जयकवाड़ी के लिए सरकारी धन के गबन के बारे में संबंधित मंत्री से सवाल किया गया, तो उन्होंने जवाब दिया कि सरकार द्वारा प्रारंभिक जांच की गई थी और इससे पता चला कि कुछ गबन हुई थी। जब उनसे इसमें शामिल व्यक्तियों के नामों के बारे में आगे पूछा गया, तो उन्होंने शिकायतकर्ता सहित अन्य व्यक्तियों के नाम बताए। उक्त कार्यवाही अभियुक्त द्वारा 4-4-1984 को अपने दैनिक में प्रकाशित की गई। क्योंकि शिकायतकर्ता का नाम शामिल व्यक्तियों में से एक के रूप में उल्लिखित किया गया था और उसके निलंबित होने की संभावना थी, इसलिए उसने विद्वान सीजेएम के समक्ष एक शिकायत का नेतृत्व किया जिसमें आरोप लगाया गया था कि उक्त रिपोर्ट के प्रकाशन के परिणामस्वरूप उसे बदनाम किया गया था।

5. यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अभियुक्त ने अपने समाचार पत्र में जो प्रकाशित किया था वह विधानसभा की कार्यवाही की एक सटीक और सच्ची रिपोर्ट थी। सरकार द्वारा की गई प्रारंभिक जांच में प्रतिवादी की संलिप्तता का खुलासा किया गया था। यदि अभियुक्त मंत्री के कथन को सही मानते हुए रिपोर्ट को सद्भावना से प्रकाशित करता है तो यह नहीं कहा जा सकता है कि उनका इरादा शिकायतकर्ता की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाना था। यह लोक सेवकों के सार्वजनिक आचरण के संबंध में एक रिपोर्ट थी जिन्हें सार्वजनिक धन सौंपा गया था जिसका उपयोग सार्वजनिक भलाई के लिए किया जाना था। इस प्रकार मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से पता चलता है कि समाचार सार्वजनिक भलाई के लिए प्रकाशित किए गए थे। उच्च न्यायालय द्वारा इन सभी पहलुओं की अनदेखी की गई है।”

(हमारा उल्लेख करते हुए, जोर देने के लिए) उपरोक्त तर्क से यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को उलट दिया और सत्र न्यायालय के आदेश को इस आधार पर बहाल किया कि अभियुक्त ने रिपोर्ट को सद्भावना से और मंत्री के कथन को सही मानते हुए प्रकाशित किया, यह नहीं कहा जा सकता कि उनका इरादा शिकायतकर्ता की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाना था, और यह कि समाचार वस्तु सार्वजनिक भलाई के लिए प्रकाशित की गई थी। इसलिए, अभियुक्त को उसमें प्राप्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए और उस बिंदु पर कोई चर्चा किए बिना राहत दी गई, जिसके बारे में हमें पता चला है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह निर्णय भी इस न्यायालय द्वारा विशेष तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए दिया गया था।

27. विशेष रूप से, जिन उदाहरणों का हमने इस निर्णय के पहले भाग में उल्लेख किया है, वे पक्षों द्वारा उद्धृत नहीं किए गए प्रतीत होते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

राजेन्द्र कुमार सीताराम पांडे (ऊपर) और जवाहरलाल दर्डा (ऊपर)

और, इस प्रकार, पीठ के माननीय न्यायाधीशों को इस पर विचार करने का लाभ नहीं मिला।

28. अरुण पुरी (ऊपर) से जो पता चलता है वह यह है कि ट्रायल मजिस्ट्रेट के आदेश का सक्रिय भाग निकाला गया था, जिसमें बलराज खन्ना (ऊपर) और एम. एन. दमानी (ऊपर) में निर्णयों का उल्लेख किया गया था; हालाँकि, अदालत द्वारा ऐसे उदाहरणों के लिए किसी भी स्पष्ट संदर्भ के बिना मामले का फैसला किया गया था।

29. न्यायालय द्वारा तैयार किए गए विधि के प्रश्न और उसके उत्तर को ध्यान में रखते हुए हमें अरुण पुरी (उपरोक्त) के तथ्यों की किसी भी बड़े विस्तार से जांच करने की आवश्यकता नहीं है। पैराग्राफ 18 में प्रश्न इस प्रकार है:

“अब हम इस प्रश्न की ओर मुड़ते हैं: क्या आई. पी. सी. की धारा 499 के किसी भी अपवाद का लाभ उठाया जा सकता है और ऐसे अपवाद के बल पर, कार्यवाही को उस स्तर पर रद्द किया जा सकता है जब संहिता की धारा 482 के तहत दायर आवेदन पर विचार किया जाता है?”

जवाहरलाल में निर्णयों के पैराग्राफ 5 और 7 को उद्धृत करने के बाद

दर्दा (ऊपर) और राजेंद्र कुमार सीताराम पांडे (ऊपर), क्रमशः,

और कानूनी स्थिति के प्रति सचेत, न्यायालय ने सावधानीपूर्वक निम्नलिखित निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ा:

“21. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि किसी दिए गए मामले में, यदि तथ्य इस तरह से उचित हैं, तो आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवाद का लाभ बढ़ाया गया है और यह एक कठोर सिद्धांत नहीं माना जाता है कि अपवाद का लाभ केवल परीक्षण के चरण में ही निर्धारित किया जा सकता है।”

(हमारा रेखांकित करना, जोर देने के लिए)

30. जवाहरलाल दर्दा (ऊपर) और राजेंद्र कुमार सीताराम पांडे

(ऊपर), हम दोहराते हैं, ऐसे निर्णय हैं जहां न्यायालय के समक्ष उत्पन्न होने वाले विवादों को संविधान के अनुच्छेद 141 के अर्थ के भीतर पूर्ववर्ती के रूप में माने जाने में सक्षम किसी भी कानून को निर्धारित किए बिना हल किया गया था। तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि अपनाए गए दृष्टिकोण ने अरुण पुरी (उपर्युक्त) मामले में न्यायालय को ऊपर उल्लिखित अवलोकन करने के लिए आगे बढ़ने के लिए राजी किया है, जिसने इस बात पर बहस का क्षेत्र खोल दिया है कि क्या आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवाद का लाभ केवल मुकदमे के चरण में ही दिया जा सकता है या क्या, यदि 241

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक जी. एम. बी. एच. बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 13 एस. सी. आर.

किसी मामले के तथ्य इस तरह से उचित हैं, इस तरह के लाभ को बढ़ाया जा सकता है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत एक याचिका के स्तर पर कार्यवाही को रद्द कर दिया जा सकता है। पीसी का इलाज किया जा रहा है।³¹ इस स्तर पर, इस न्यायालय के कुछ अन्य निर्णयों का उल्लेख करना और उन पर चर्चा करना अनुचित नहीं होगा जिन्हें वर्तमान निर्णय के लिए प्रासंगिक माना जाता है। इन सभी निर्णयों में, समन आदेशों की वैधता के मुद्दे की जांच की गई और प्रत्येक मामले के तथ्यों के साथ संबंधित कानूनों की चर्चा पर निर्भर करते हुए, विवादित आदेश को या तो बनाए रखा गया/बाधित किया गया। जबकि पहले दो निर्णय प्राचीन काल के हैं, अर्थात् वादिलाल पांचाल बनाम दत्तात्रेय दुलाजी घाडीगांवकर **17** और चंद्र देव

सिंह बनाम प्रकाश चंद्र बोस **18**, क्रमशः 3 (तीन) और 4 (चार) माननीय न्यायाधीशों की पीठों द्वारा दिए गए निर्णय हैं, शेष तीन बहुत दूर के मूल के निर्णय नहीं हैं, अर्थात् जेफ रे जे. डायरमियर बनाम राज्य

पश्चिम बंगाल **19**, मनोज कुमार तिवारी बनाम मनीष सिसोदिया **20** और बी. आर. के.

अथिथन बनाम सन समूह **21** इस न्यायालय के 2 (दो) माननीय न्यायाधीशों की पीठों द्वारा प्रस्तुत किया गया।

32. वादिलाल पांचाल (उपरोक्त) का उदय बॉम्बे उच्च न्यायालय के उस निर्णय से हुआ, जिसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 203 के तहत प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट के आदेश को उलट दिया गया था। पीसी। एक सार्वजनिक आंदोलन के दौरान, एक सीताराम की मृत्यु अपीलार्थी द्वारा गोली लगने से हुई थी। प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत दर्ज होने पर, उन्होंने पुलिस अधीक्षक, सी. आई. डी. द्वारा जांच का आदेश दिया। इस तरह की जांच के दौरान एकत्र की गई सामग्री से पता चलता है कि सीताराम की हत्या के आरोपी अपीलार्थी ने आत्मरक्षा के अपने अधिकार का प्रयोग किया था। उसी पर विचार करते हुए और शिकायतकर्ता को उचित अवसर देने के बाद, प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट ने शिकायत को खारिज कर दिया। बॉम्बे हाई कोर्ट ने बर्खास्तगी के आदेश को दरकिनार कर दिया और प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट को अपीलार्थी के खिलाफ प्रक्रिया जारी करने और कानून के अनुसार मामले से निपटने का निर्देश दिया, इस आधार पर कि हालांकि सीताराम की मृत्यु निर्विवाद थी, आरोपी को भारतीय दंड संहिता की धारा 96 और उसके बाद के निजी बचाव के अधिकार के आवश्यक तत्व स्थापित करने होंगे; कि इनमें से किसी में भी कुछ भी नहीं था।

17 (1961) 1 एस. सी. आर. 1 18 (1964) 1 एस. सी. आर. 639 19 (2010) 6 एस. सी. सी. 243

20 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1434 21 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1705

242

अध्याय XVI की धाराओं में यह दिखाने के लिए कि इस तरह के अपवाद को केवल पुलिस की रिपोर्ट से स्थापित किया जा सकता है; कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 या 203 में कुछ

भी नहीं है। पी. सी. ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 105 में निर्धारित अनुमान और उस धारा में अनिवार्य भाषा में निर्धारित अपवाद के प्रमाण के तरीके के बारे में नियम को निरस्त कर दिया; और यह कि यह एक उचित मामला नहीं था जिसमें प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट को धारा 203 के तहत शिकायत को खारिज कर देना चाहिए था, क्योंकि अभियुक्त द्वारा अनुरोध किए गए निजी बचाव के अधिकार के अपवाद को स्थापित करने के लिए उनके सामने सबूत के रूप में और सबूत के रूप में कोई सबूत नहीं था।

32.1 इस न्यायालय के समक्ष जो प्रश्न उठा, वह यह था कि क्या बंबई उच्च न्यायालय का यह विचार सही था कि जब कोई मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के तहत जांच का निर्देश देता है। पी. सी. शिकायत की सच्चाई या झूठ का पता लगाने के लिए और शिकायत करने वाले व्यक्ति द्वारा की गई आत्मरक्षा की याचिका का समर्थन करने वाले पूछताछ अधिकारी से एक रिपोर्ट प्राप्त करने के लिए, क्या यह अभिनिर्धारित करने के लिए खुला नहीं है कि याचिका सही है। क्या मजिस्ट्रेट को, कानून के मामले में, ऐसे मामले में प्रक्रिया जारी करनी चाहिए और मुकदमे में आत्मरक्षा की अपनी याचिका को स्थापित करने के लिए शिकायत करने वाले व्यक्ति को छोड़ देना चाहिए? 32.2 विवादित निर्णय को दरकिनार करते हुए और मजिस्ट्रेट के आदेश को बहाल करते हुए, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि बॉम्बे उच्च न्यायालय ने ऐसे मामले में यह अभिनिर्धारित करने में गलती की थी कि कानून के मामले के रूप में, प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट के लिए यह निष्कर्ष निकालना खुला नहीं था कि कोई अपराध नहीं किया गया था और उनके समक्ष सामग्री पर शिकायत पर आगे बढ़ने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं था।

32.3 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200, 202 और 203 की योजना पर चर्चा करने के बाद। पीसी, यह वही है जो इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

“10. अब, हमारे समक्ष मामले में यह तर्क नहीं दिया गया है कि विद्वान प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट उन सामग्रियों पर विचार करने में विफल रहे जिन पर उन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 के तहत अपना आदेश पारित करने से पहले विचार करना था। वास्तव में विद्वान मजिस्ट्रेट ने इन सामग्रियों पर पूरी तरह से, निष्पक्ष और निष्पक्ष रूप से विचार किया। प्रत्यर्थी-शिकायतकर्ता की ओर से जो तर्क दिया गया है वह यह है कि कानून के मामले के रूप में विद्वान मजिस्ट्रेट के लिए आत्मरक्षा के अधिकार की याचिका को उस स्तर पर स्वीकार करने के लिए खुला नहीं था जब उसे केवल यह निर्धारित करना था कि अपीलार्थी के खिलाफ कोई प्रक्रिया जारी की जानी चाहिए या नहीं। हम इस तर्क को 243 के रूप में स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक जी. एम. बी. एच. बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.]
244

सही है। धारा 203 के प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि मजिस्ट्रेट को जो निर्णय देना है, वह शिकायतकर्ता और उसके गवाहों के बयानों और जांच या जांच के परिणाम पर आधारित होना चाहिए। यह धारा स्वयं यह स्पष्ट करती है और इसके समर्थन में अधिकारियों को संदर्भित करना

आवश्यक नहीं है।लेकिन मजिस्ट्रेट को जो निर्णय देना है, वह यह है कि कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं।इसका मतलब यह नहीं है कि मजिस्ट्रेट जांच या जांच के परिणाम को स्वीकार करने के लिए बाध्य है या उसे उस व्यक्ति की ओर से दायर किसी भी याचिका को स्वीकार करना होगा जिसके खिलाफ शिकायत की गई है।मजिस्ट्रेट को अपने न्यायिक दिमाग को उन सामग्रियों पर लागू करना चाहिए जिन पर उसे अपना निर्णय लेना है।अपने निर्णय पर पहुंचने में वह न्यायिक विचारों के अलावा किसी भी तरह से बंधा हुआ नहीं है; वह जांच अधिकारी जो कहता है उसे स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है, और न ही वह किसी अपवाद के आधार पर याचिका स्वीकार करने से वंचित है, बशर्ते कि हमेशा संतोषजनक और विश्वसनीय सामग्री हो जिस पर वह अपने निर्णय को आधार बना सके कि क्या शिकायत पर आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं।यदि मजिस्ट्रेट ने धारा 202 के तहत जांच के दायरे के बारे में खुद को गलत तरीके से निर्देशित नहीं किया है और अपने सामने मौजूद सामग्रियों पर न्यायिक रूप से अपना दिमाग लगाया है, तो हम सोचते हैं कि यदि (एस. आई. सी.) यह अभिनिर्धारित करना कानूनी रूप से गलत होगा कि एक अपवाद पर आधारित याचिका को वह अपने निर्णय पर पहुंचने में कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता है।शिकायतकर्ता और उसके गवाहों के मामले में इस तरह की याचिका का क्या संबंध है, अन्य गवाहों के साक्ष्य द्वारा उन्हें किस हद तक गलत साबित किया जाता है-ये सभी ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर प्रत्येक मामले के तथ्यों के संदर्भ में दिया जाना चाहिए।ऐसे प्रश्नों के संबंध में कोई सार्वभौमिक नियम नहीं रखा जा सकता है।”

(हमारा उल्लेख करते हुए, जोर देने के लिए) 33।प्रोफी टेबल में इसके बाद चंद्र देव सिंह (उपरोक्त) मामले में निर्णय का उल्लेख किया जा सकता है, जहां 4 (चार) माननीय न्यायाधीशों की पीठ को कलकत्ता में उच्च न्यायालय के फैसले को चुनौती देने पर विचार करने का अवसर मिला था।वहाँ, इस न्यायालय को एक ऐसी परिस्थिति के साथ प्रस्तुत किया गया था जहाँ एक दरवान की हत्या का आरोप लगाने वाली दो शिकायतें उप-मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष दर्ज की गई थीं।पहली शिकायत मृतक के एक दूर के रिश्तेदार द्वारा तीन व्यक्तियों पर हत्या का आरोप लगाते हुए दर्ज की गई थी, जबकि दूसरी शिकायत अपीलार्थी द्वारा प्रतिवादी नं.1 अपने चाचा की हत्या करना।अलग-अलग आदेशों द्वारा, उप-मंडल मजिस्ट्रेट ने निर्देश दिया कि

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, न्यायिक जांच करने के लिए।मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी द्वारा अलग-अलग रिपोर्ट प्रस्तुत की गईं।अपनी पहली रिपोर्ट में, उन्होंने राय दी कि तीन अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए एक प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया था, जबकि अपनी दूसरी रिपोर्ट में, उन्होंने राय दी कि प्रथम प्रतिवादी के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनाया गया था।उप-मंडल मजिस्ट्रेट ने दूसरी रिपोर्ट पर विचार करते हुए प्रतिवादी नं.1 बिना कोई कारण बताए।हालांकि, उप-मंडल मजिस्ट्रेट ने तीन अन्य अभियुक्तों के खिलाफ समन जारी किया।इसके बाद, अपीलार्थी ने एक पुनरीक्षण के साथ सत्र न्यायाधीश से संपर्क किया,

जिन्होंने प्रतिवादी नं.1, उप-मंडल मजिस्ट्रेट को उनके खिलाफ आगे की जांच करने का निर्देश दिया।वहाँ से, प्रत्यर्थी नं.1 सत्र न्यायाधीश के निर्देश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण आवेदन को प्राथमिकता दी।उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा इसकी अनुमति दी गई थी और संविधान के अनुच्छेद 134 (1) (सी) के तहत प्रमाण पत्र दिए जाने पर, मामले को इस न्यायालय में ले जाया गया था।यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रथम दृष्टया एक मामले के समापन पर, अभियुक्त व्यक्ति के बचाव होने के बावजूद मजिस्ट्रेट प्रक्रिया जारी करने के लिए बाध्य था।इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि मामले का निर्णय उचित स्तर पर एक उपयुक्त मंच द्वारा किया जाना था, और प्रक्रिया जारी करने से इनकार नहीं किया जा सकता था।

33.1 हम इस तरह के निर्णय से कुछ प्रासंगिक टिप्पणियों को उद्धृत करना उचित मानते हैं, जो नीचे दिए गए हैं:

“7. ***, दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XVI की पूरी योजना से हमें यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि एक अभियुक्त व्यक्ति प्रक्रिया जारी होने तक तस्वीर में बिल्कुल नहीं आता है।इसका मतलब यह नहीं है कि जब मजिस्ट्रेट द्वारा जांच की जाती है तो वह उपस्थित नहीं रहता है।वह या तो व्यक्तिगत रूप से या एक वकील या एजेंट के माध्यम से उपस्थित रह सकता है ताकि यह सूचित किया जा सके कि क्या हो रहा है।लेकिन चूंकि विचार करने के लिए सवाल यह है कि क्या उसे किसी आरोप का सामना करने के लिए बुलाया जाना चाहिए, इसलिए उसे कार्यवाही में भाग लेने का कोई अधिकार नहीं है और न ही मजिस्ट्रेट को ऐसा करने की अनुमति देने का कोई अधिकार क्षेत्र है।अतः इसके बाद यह होगा कि मजिस्ट्रेट के लिए यह खुला नहीं होगा कि वह अभियुक्त के रूप में नामित व्यक्ति के कहने पर गवाहों से कोई सवाल करे, लेकिन जिसके खिलाफ प्रक्रिया जारी नहीं की गई है और न ही वह ऐसे व्यक्ति के कहने पर किसी गवाह से पूछताछ कर सकता है।बेशक, मजिस्ट्रेट स्वयं इस तरह के 245 सवाल पूछने के लिए स्वतंत्र हैं।

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 246

शिकायतकर्ता द्वारा अपने समक्ष पेश किए गए गवाहों को, जो वह न्याय के हित में उचित समझे। लेकिन उससे आगे वह नहीं जा सकता।... इसमें कोई संदेह नहीं है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के प्रावधानों के पीछे एक उद्देश्य मजिस्ट्रेट को शिकायत में लगाए गए आरोपों की सावधानीपूर्वक जांच करने में सक्षम बनाना है ताकि उसमें आरोपी के रूप में नामित व्यक्ति को स्पष्ट रूप से तुच्छ शिकायत का सामना करने के लिए बुलाए जाने से रोका जा सके।लेकिन इस प्रावधान के पीछे एक और उद्देश्य भी है और यह पता लगाना है कि शिकायत में लगाए गए आरोपों का समर्थन करने के लिए क्या सामग्री है।जाँच करते समय मजिस्ट्रेट का यह बाध्य कर्तव्य है कि वह सभी तथ्यों को न केवल एक अनुपस्थित अभियुक्त व्यक्ति के हितों की रक्षा करने की दृष्टि से, बल्कि किसी ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के खिलाफ मामला दर्ज करने की दृष्टि से भी सामने लाए, जिनके खिलाफ गंभीर आरोप लगाए गए हैं।शिकायत तुच्छ है या नहीं, उस स्तर पर, शिकायतकर्ता द्वारा उसके सामने रखी गई सामग्री के आधार पर निर्धारित किया जाना

आवश्यक है। अभियुक्त के पास जो भी बचाव हो, उसकी जाँच केवल मुकदमे में ही की जा सकती है। धारा 202 के तहत एक जांच को किसी भी अर्थ में इस सरल कारण से एक परीक्षण के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है कि कानून में एक गैर-कानूनी के लिए केवल एक परीक्षण हो सकता है। जाँच के दौरान किसी अभियुक्त व्यक्ति को हस्तक्षेप करने की अनुमति देना उसके उद्देश्य को विफल कर देगा और यही कारण है कि विधायिका ने किसी अभियुक्त व्यक्ति को जाँच में भाग लेने की अनुमति देने का कोई विशेष प्रावधान नहीं किया है।***”

(33. 2 वाडिलाल पांचाल (ऊपर) में दिए गए निर्णय पर विचार करते हुए, उसमें जो कहा गया था, उसे निम्नलिखित शब्दों में समझाया गया था:

“13. *** हम यह इंगित कर सकते हैं कि चूंकि धारा 202 के तहत जांच का उद्देश्य यह पता लगाना है कि क्या शिकायत में लगाए गए आरोप आंतरिक रूप से सच हैं, इसलिए धारा 203 के तहत कार्य करने वाले मजिस्ट्रेट को खुद को संतुष्ट करना होगा कि कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है। इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, वह अपने द्वारा लिए गए या धारा 202 के तहत जांच में दर्ज किए गए साक्ष्य या उस धारा के तहत जांच में दिए गए बयानों पर विचार करने का हकदार है, जैसा भी मामला हो। वह इसके अलावा किसी भी सामग्री पर भरोसा करने का हकदार नहीं है।***”

(हमारा रेखांकित करना, जोर देने के लिए)

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

उसी अनुच्छेद में, रामगोपाल में निर्णय का उल्लेख करने के बाद

गणपतराय रुइया बनाम बॉम्बे राज्य 22, न्यायालय ने यह फैसला सुनाया कि:

“*** इस प्रकार, जहां एक प्रथम दृष्टया मामला है, भले ही दोनों पक्षों पर बहुत कुछ कहा जा सकता है, एक दोषी मजिस्ट्रेट मुकदमे के लिए एक आरोपी को प्रतिबद्ध करने के लिए बाध्य है। अतः इससे भी बड़ा कारण यह है कि जहां प्रथम दृष्टया साक्ष्य है, भले ही किसी अभियुक्त के पास वर्तमान मामले में इस तरह का बचाव हो कि अपराध किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्ति द्वारा किया गया है, मामले को उचित मंच द्वारा उचित स्तर पर निर्णय लेने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए और प्रक्रिया जारी करने से इनकार नहीं किया जा सकता है। संयोग से, हम यह इंगित कर सकते हैं कि जिस अपराध के लिए प्रतिवादी 1 पर आरोप लगाया गया है, वह जूरी द्वारा परीक्षण योग्य है। उच्च न्यायालय, जिस तरह से उसने किया है, उस तरह से साक्ष्य से निपटते हुए, मजिस्ट्रेट द्वारा जूरी के कार्यों को हड़पने को प्रभावी रूप से मंजूरी दे दी है, जिसे करने में मजिस्ट्रेट पूरी तरह से अक्षम था।” (जोर देने के लिए हमारा उल्लेख करते हुए) 34। यह सच है कि न तो वादिलाल पांचाल (ऊपर) और न ही चंद्र देव सिंह (ऊपर) मानहानि की कार्यवाही से उभरे, लेकिन दोनों मामलों में आरोपी के बचाव पर अलग-अलग परिस्थितियों में विचार किया

गया था।जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वाडीलाल पंचाल (ऊपर) में प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट के इस आधार पर शिकायत को खारिज करने के आदेश को कि आरोपी ने आत्मरक्षा के अपने अधिकार का प्रयोग किया था, बॉम्बे उच्च न्यायालय के आदेश को दरकिनार करने पर बहाल किया गया था; जबकि, चंद्र देव सिंह (ऊपर) में, कलकत्ता में उच्च न्यायालय के आदेश को दरकिनार करने पर आगे की जांच का निर्देश देने वाले उप-मंडल मजिस्ट्रेट के आदेश को बहाल किया गया था।वडिलाल पांचाल (ऊपर) में निर्णय को चंद्र देव सिंह (ऊपर) में बड़ी पीठ द्वारा खारिज नहीं किया गया था।हमारी राय में इस तरह के निर्णय प्रासंगिक हैं क्योंकि इस तरह से दिए गए मार्गदर्शन का बहुत महत्व है।

35. जेफ रे जे. डायरमियर (ऊपर) में, इस न्यायालय से इस बात पर विचार करने के लिए कहा गया था कि क्या कलकत्ता में उच्च न्यायालय आई. पी. सी. की धारा 34 के साथ पठित धारा 500 के तहत एक निजी शिकायत को रद्द करने से इनकार करने में सही था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि मुकदमे के दौरान प्रमुख साक्ष्य द्वारा यह प्रदर्शित करना अभियुक्त का काम है कि कथित रूप से मानहानिकारक बयान एक अपवाद के तहत आया है।

22 1958 एससीआर 618 247

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 248

आई. पी. सी. की धारा 499 में उल्लिखित। उसमें अपीलकर्ताओं ने प्रतिवादी के खिलाफ एक सार्वजनिक नोटिस जारी किया था। 2, जो प्रत्यर्थी नं। 2 कथित रूप से मानहानिकारक प्रकृति का है।अपीलकर्ताओं ने दलील दी कि उपरोक्त नोटिस जनहित में प्रकाशित किया गया था, और इस प्रकार यह आई. पी. सी. की धारा 499 के दसवें अपवाद के तहत शामिल था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह साधारण कानून है कि अभियुक्त के लिए सबूत का भार उचित संदेह से परे सबूत नहीं हो सकता है, फिर भी अभियुक्त को अभी भी इस संभावना की प्रधानता दिखानी थी कि उसका बयान आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवाद के तहत शामिल किया जाएगा। अभियुक्त द्वारा केवल यह कहना कि उसका बयान सार्वजनिक हित में था, उसके बचाव को स्वीकार करने के लिए पर्याप्त नहीं था और उसे मुकदमे के दौरान सबूत पेश करके इसे सही ठहराना चाहिए।सम्पूर्ण शिकायत के साथ-साथ उपरोक्त कारणों पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने माना कि विवादित आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

36. मनोज कुमार तिवारी (उपरोक्त) मामले में, इस न्यायालय द्वारा समन आदेश को रद्द करने से इनकार करने वाले आदेश पर विचार किया गया था।इसमें, अतिरिक्त मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट ने कथित मानहानिकारक बयान की सामग्री में गए बिना आईपीसी की धारा 500 के तहत एक आरोपी को समन जारी किया था।दूसरी ओर, दिल्ली उच्च न्यायालय ने बयानों की जांच करते हुए केवल आई. पी. सी. की धारा 499 पर भरोसा करते हुए समन को बरकरार रखा। इस अदालत ने माना कि यह एक गलत दृष्टिकोण था क्योंकि मजिस्ट्रेट को शिकायत पर अपना दिमाग लगाना चाहिए था और यह निर्धारित करना चाहिए था कि आरोपी को समन जारी करने

से पहले बयान प्रथम दृष्टया मानहानिकारक था या नहीं। इस न्यायालय ने आगे कहा कि उन बयानों पर शिकायत कायम नहीं रखी जा सकती जो इसके बावजूद गैर-मानहानिकारक थे। इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह आपराधिक न्यायशास्त्र का एक मौलिक नियम है कि यदि किसी शिकायत में निहित आरोप शिकायत का उल्लंघन नहीं करते हैं, तो अभियुक्त को मुकदमे की अग्रिमपरीक्षा से नहीं गुजरना चाहिए।

37. बी. आर. के. आथिथन (ऊपर) सबसे हालिया उत्पत्ति का निर्णय है। इसमें, तथ्यात्मक परिप्रेक्ष्य ऐसा था कि अपीलार्थी से संबंधित कुछ रिपोर्ट उत्तरदाताओं के एक टेलीविजन चैनल पर प्रसारित की गई थी, और इसे मानहानिकारक के रूप में तर्क दिया गया था। इस न्यायालय ने प्रक्रिया जारी करने के चरण में आई. पी. सी. की धारा 499 के चौथे अपवाद पर विचार करते हुए न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा न्यायिक दिमाग को लागू करने की आवश्यकता पर जोर दिया। इस न्यायालय ने वहाँ निम्नलिखित टिप्पणी की:

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

“16. इसमें अनिवार्य रूप से न्यायिक दिमाग का उपयोग एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए शामिल था कि आरोपी को तलब किया जाए या नहीं। तत्काल मामले में, विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पाया कि अपीलार्थी द्वारा लगाए गए आरोप आई. पी. सी. की धारा 499 के चौथे अपवाद के अनुरूप थे, उन्होंने प्रत्यर्थियों को प्रक्रिया जारी करने से इनकार कर दिया। ऐसी बर्खास्तगी को न्यायिक दिमाग के अनुप्रयोग के बिना नहीं कहा जा सकता है। न्यायिक दिमाग का अनुप्रयोग और एक गलत निष्कर्ष पर पहुंचना दो अलग-अलग चीजें हैं। उचित विवेक के प्रयोग के बाद भी न्यायालय एक गलत निष्कर्ष पर पहुँच सकता है और ऐसा आदेश हमेशा एक उच्च न्यायालय के समक्ष न्यायसंगत होता है। भले ही उक्त आदेश को दरकिनारा कर दिया गया हो, इसका मतलब यह नहीं है कि निचली अदालत ने अपना दिमाग नहीं लगाया।”

38. हम ध्यान देते हैं कि एक अलग संदर्भ में, नेशनल बैंक ऑफ ओमान बनाम बरकारा अब्दुल अज़ीज़ 23 में इस न्यायालय ने एक मजिस्ट्रेट के कर्तव्य का सारांश इस प्रकार दिया है:

“8. शिकायत प्राप्त करने वाले मजिस्ट्रेट का कर्तव्य धारा 202 सी. आर. पी. सी. में निर्धारित किया गया है और मजिस्ट्रेट पर यह दायित्व है कि यदि कोई ऐसा मामला है जिसकी आपराधिक अदालत द्वारा जांच की आवश्यकता है तो उसे ठीक किया जाए। इस धारा के तहत जांच का दायरा केवल शिकायत में लगाए गए आरोपों की सच्चाई या अन्यथा पता लगाने तक सीमित है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि प्रक्रिया जारी की जानी है या नहीं। सी. आर. पी. सी. की धारा 202 के तहत जांच धारा 156 में अनुध्यात जांच से अलग है क्योंकि यह केवल मजिस्ट्रेट को यह तय करने के लिए आयोजित करने के लिए है कि उसके लिए आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। इसलिए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के तहत जांच का दायरा शिकायत में लगाए गए आरोपों की सच्चाई या झूठ का पता लगाने तक सीमित है:

((i) शिकायतकर्ता द्वारा न्यायालय के समक्ष रखी गई सामग्री पर;

((ii) यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए कि क्या प्रक्रिया जारी करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया है; और

((ग) विशुद्ध रूप से शिकायतकर्ता के दृष्टिकोण से प्रश्न का निर्णय लेने के लिए, बिना किसी बचाव के जो अभियुक्त के पास हो सकता है।”

(हमारा रेखांकित करना, जोर देने के लिए)

23 (2013) 2 एससीसी 488 249

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 250

39. निस्संदेह, इस न्यायालय के निर्णय दो दिशाओं में आगे बढ़ते हैं। हालांकि ऐसे कई निर्णय हैं जहां इस न्यायालय ने लगातार एक विशेष पंक्ति में कानून को निर्धारित किया है कि यह मजिस्ट्रेट के लिए है कि वह मुकदमे में धारा 499, आई. पी. सी. के अपवादों पर विचार करे, जब पक्ष द्वारा बचाव पक्ष द्वारा इसका लाभ उठाने का अनुरोध किया जाता है और उसके द्वारा सबूत के निर्वहन के बोझ पर और यह कि ऐसा मजिस्ट्रेट शिकायतकर्ता के दृष्टिकोण से विशुद्ध रूप से प्रश्न का निर्णय करते समय धारा 202 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय आरोपी के संभावित बचाव का विज्ञापन नहीं कर सकता है, निर्णयों की दूसरी पंक्ति इस आधार पर आगे बढ़ती प्रतीत होती है कि अपवादों पर विचार करने में कोई बाधा नहीं है यदि आरोपी, समन आदेश के जवाब में मजिस्ट्रेट के सामने पेश हुए बिना भी, धारा 482, सी. आर. पी. के तहत चुनौती देता है। पी. सी. और संबंधित उच्च न्यायालय को स्वयं शिकायत और शिकायतकर्ता और उसके गवाह के बयानों का उल्लेख करके संतुष्ट करता है कि कथित तथ्य (भले ही सच माने गए हों) अनुचित नहीं हैं और इसलिए, कार्यवाही के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं था। वास्तव में, अरुण पुरी (ऊपर) ने कहा है कि कोई कठोर सिद्धांत नहीं है कि अपवादों पर केवल पूर्व-परीक्षण चरण में विचार किया जा सकता है; दूसरे शब्दों में, रद्द करने के लिए याचिका पर विचार करने के चरण में, इसे किसी दिए गए मामले में इस तरह बढ़ाया जा सकता है, और अदालत को कार्यवाही को रद्द करने का अधिकार होगा यदि इस तरह के लाभ का विस्तार तथ्यों पर उचित है।

40. इस न्यायालय के निर्णयों का सामना करने वाले उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों पर क्या लागू होता है, जहां राय का विभाजन स्पष्ट है, और विशेष रूप से जब उच्च न्यायालय तकनीकी रूप से दोनों निर्णयों से बाध्य हैं, तो इस न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों पर समान रूप से लागू होता है। इस न्यायालय के 2 (दो) न्यायाधीशों वाली पीठ के लिए यह अभिनिर्धारित करना अनुचित होगा कि निर्णयों की कौन सी पंक्ति सही कानून निर्धारित करती है। ऐसे परिदृश्य में, जब इस न्यायालय के निर्णय एक-दूसरे के साथ समन्वय में विचार व्यक्त नहीं करते हैं, तो पहला तरीका यह पता लगाना है कि एक बड़ी पीठ द्वारा कौन सा निर्णय दिया गया है। जाहिर है, इस न्यायालय के निर्णयों के बीच, एक संविधान पीठ का निर्णय कम संख्या वाली पीठों के लिए

बाध्यकारी होगा। जिन निर्णयों पर हमने विचार किया है, उनमें से कोई भी संविधान पीठ द्वारा नहीं दिया गया है। तथापि, 4 (चार) माननीय न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिया गया एकमात्र निर्णय और 3 (तीन) माननीय न्यायाधीशों की पीठों द्वारा दिए गए 3 (तीन) निर्णय हैं, जो सम्मान की मांग करते हैं। आम तौर पर, एक बड़ी पीठ के निर्णय को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जब तक कि

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

बेशक कम शक्ति वाली पीठ पहले के दृष्टिकोण पर संदेह करती है, उत्तर के लिए बिंदु तैयार करती है और कानून के अनुसार एक बड़ी पीठ द्वारा आगे के विचार के लिए मामले को संदर्भित करती है। हालाँकि, यदि अलग-अलग विचार रखने वाले निर्णय सह-समान ताकत वाली पीठों द्वारा दिए जाते हैं, तो अगला तरीका अपनाया जाना चाहिए कि उन विचारों को मिलाने का प्रयास किया जाए जो अलग-अलग प्रतीत होते हैं और उन विपरीत निर्णयों को यह मानते हुए समझाया जाए कि वे अलग-अलग तथ्यों पर लागू होते हैं। दूसरा उपलब्ध तरीका यह देखना है कि क्या पिछले निर्णय पर ध्यान दिया गया है, विचार किया गया है और बाद के निर्णय में समझाया गया है; यदि नहीं, तो पहले का निर्णय बाध्यकारी बना रहता है, जबकि यदि उत्तर संबंधात्मक है, तो बाद का निर्णय बाध्यकारी निर्णय बन जाता है। हम एक चेतावनी जोड़ते हैं कि यदि बाद की पीठ, पूर्ववर्ती पीठ के निर्णय पर विचार करने पर अपने समक्ष मामले का फैसला करने के बजाय, अलग-अलग बिंदु तैयार करती है और एक बड़ी पीठ द्वारा निर्णय के लिए एक संदर्भ देती है, तो यह पूर्व निर्णय है जो तब तक क्षेत्र को नियंत्रित करता रहता है जब तक कि बड़ी पीठ संदर्भ का फैसला नहीं करती है।

41. इस प्रस्ताव के लिए यह भी अधिकार है कि तथ्यों पर मामलों का निर्णय करते समय, विशेष रूप से आपराधिक मामलों में, अदालतों को यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक मामला अपने स्वयं के तथ्यों पर आधारित होना चाहिए और एक मामले में तथ्यों की समानता का उपयोग दूसरे मामले में तथ्य के निष्कर्ष को ध्यान में रखने के लिए नहीं किया जा सकता है। हम इस संदर्भ में कल्याण चंद्र सरकार बनाम राजेश रंजन 24 के निर्णय का उपयोगी उल्लेख कर सकते हैं।

42. उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हमने अत्यधिक सावधानी के साथ, स्पष्ट रूप से असंगत टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए निर्णयों का अध्ययन किया है। यह देखा गया है कि प्रत्येक निर्णय में प्राप्त निष्कर्ष प्रत्येक मामले में विशेष तथ्यों पर आधारित होते हैं और इस अपील पर निर्णय के लिए उत्पन्न होने वाले प्रश्नों का उत्तर कानून में सामंजस्य स्थापित करके दिया जा सकता है जैसा कि उससे मार्गदर्शन प्राप्त करने पर घोषित किया गया है।

43. प्रासंगिक सीमा तक, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2 (एन)। पी. सी. ने किसी भी कार्य या चूक को उस समय लागू किसी भी कानून द्वारा दंडनीय बनाया गया है। धारा 200 आदेश देती है कि शिकायत प्राप्त होने पर मजिस्ट्रेट को अन्य बातों के साथ क्या करना चाहिए। शिकायत पर

आपत्ति का संज्ञान लेने में, उसे (i) शिकायतकर्ता की शपथ पर जाँच करने की आवश्यकता होती है और

24 (2005) 2 एससीसी 42 251

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 252

उपस्थित गवाह, यदि कोई हो; (ii) लिखित रूप में ऐसी परीक्षा का सार कम करें; (iii) ऐसे लेखन पर शिकायतकर्ता और गवाह, यदि कोई हो, के हस्ताक्षर प्राप्त करें; और (iv) उसी पर भी हस्ताक्षर करें। धारा 202 एक ऐसा प्रावधान है जो मजिस्ट्रेट को अभियुक्त के खिलाफ प्रक्रिया के मुद्दे को स्थगित करने में सक्षम बनाता है और यदि वह ऐसा समझता है, तो या तो (ए) मामले की स्वयं जांच करें या (बी) (आई) एक पुलिस अधिकारी या (बी) ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा जांच करने का निर्देश दें जिसे वह ऐसा समझता है। कानून मजिस्ट्रेट को इस तरह के कदम उठाने की अनुमति देता है ताकि यह निर्णय लिया जा सके कि शिकायत में लगाए गए आरोपों की सच्चाई या झूठ का पता लगाकर आरोपी के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। धारा 203 मजिस्ट्रेट को धारा 200 के तहत शिकायतकर्ता और गवाह, यदि कोई हो, के शपथ पर बयानों पर विचार करने के बाद या धारा 202 के तहत जांच या जांच के परिणाम पर विचार करने के बाद, संक्षिप्त कारणों के साथ शिकायत को खारिज करने के लिए अधिकृत करती है, अगर उसके फैसले में कोई 'कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार' न हो। दूसरी ओर, दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XVI के तहत धारा 204। 'मजिस्ट्रेटों के समक्ष कार्यवाही की शुरुआत' शीर्षक वाले पी. सी. में परिकल्पना की गई है कि यदि मजिस्ट्रेट की राय में 'कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार' है तो वह संज्ञान लेते हुए आवश्यक प्रक्रिया के मुद्दे के लिए कदम उठाएगा। अतः उपरोक्त सामान्य योजना से यह बहुत स्पष्ट है कि अभियुक्त प्रक्रिया जारी करने से पहले मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए निर्णय के क्षेत्र में प्रवेश नहीं करता है।

44. इस प्रकार, जब कोई मजिस्ट्रेट धारा 200 के तहत इस बात का संज्ञान लेता है कि प्रथम दृष्टया संतुष्टि के आधार पर कि कोई आपराधिक अपराध बनता है, तो उसे शिकायत में लगाए गए आरोपों, शिकायत के समर्थन में शिकायतकर्ता द्वारा दिए गए बयानों, उसके द्वारा प्रस्तुत किए गए आरोपों के समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य, यदि कोई हो, के साथ-साथ किसी भी गवाह के बयानों को देखकर खुद को संतुष्ट करने की आवश्यकता होती है, जिसे शिकायतकर्ता शिकायत में लगाए गए आरोपों का समर्थन करने के लिए पेश करना चुन सकता है। यद्यपि हम यहां धारा 202 से संबंधित नहीं हैं, यदि इसके तहत कोई जांच या जांच की जाती है, तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि धारा 204 के तहत प्रक्रिया जारी करने से पहले मजिस्ट्रेट द्वारा रिपोर्टों को भी देखा जाना चाहिए। हालांकि, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि जिस स्तर पर मजिस्ट्रेट आरोपी को बुलाने का आदेश पारित करने का फैसला करता है, ऊपर उल्लिखित प्रकृति की जांच का उद्देश्य यह राय बनाना नहीं होना चाहिए कि क्या सामग्री 'दोषसिद्धि' के लिए पर्याप्त है; इसके बजाय, उसे एक राय बनाने की आवश्यकता है कि क्या -

[2023] 13 एस सी आर।

'कार्यवाही' के लिए सामग्री पर्याप्त हैं जैसा कि संबंधित अध्याय का शीर्षक इंगित करेगा। चूंकि आरोपी उस स्तर पर अखाड़े में प्रवेश नहीं करता है, इसलिए आरोपी द्वारा प्रक्रिया जारी करने को विफल करने के लिए बचाव करने का सवाल ही नहीं उठता है। फिर भी, यह तथ्य कि अभियुक्त मजिस्ट्रेट के सामने नहीं है, इसका मतलब यह नहीं है कि मजिस्ट्रेट को अपने न्यायिक दिमाग को लागू करने की आवश्यकता नहीं है। लागू कानून में कुछ भी मजिस्ट्रेट को कानून के अन्य प्रावधानों पर अपने न्यायिक दिमाग को लागू करने और यह पता लगाने से नहीं रोकता है कि क्या, प्रथम दृष्टया, अपराध दंड संहिता की धारा 2 (एन) की अवहेलना के रूप में "अनुचित" है। पी. सी. बनाया गया है। इस तरह की राय बनाए बिना, धारा 204 के अनुसार "कार्यवाही" का सवाल ही नहीं उठता है। कानून मजिस्ट्रेट पर एक आवश्यकता के रूप में जो अधिरोपित करता है वह यह है कि वह केवल उन सामग्रियों पर विचार करने के लिए बाध्य है जो धारा 200 और 202 के साथ-साथ एक कानून के किसी भी लागू प्रावधान के संदर्भ में उसके सामने लाई गई हैं, और उस पर कानून द्वारा प्रतिबंध के रूप में जो लगाया गया है वह यह है कि वह किसी भी सामग्री पर विचार करने से वंचित है जो कानूनी प्रक्रिया द्वारा अनुमत तरीके से रिकॉर्ड पर नहीं लाई गई है। उपरोक्त प्रस्ताव के तार्किक परिणाम के रूप में, जो निम्नलिखित है वह यह है कि मजिस्ट्रेट प्रक्रिया जारी करने या नहीं करने का निर्णय लेते समय अपने समक्ष सामग्री को देखते हुए एक विचार तैयार करने का हकदार है। हालांकि, यदि ऐसी सामग्री स्वयं किसी भी अपवाद के तहत पूर्ण बचाव का खुलासा करती है, तो मजिस्ट्रेट को न्यायिक दिमाग के आवेदन पर इस तरह के अपवाद का लाभ लेने से कुछ भी नहीं रोकता है ताकि एक तुच्छ शिकायत को अनावश्यक परीक्षण शुरू करने से रोका जा सके। चूंकि अभियोजन शुरू करना एक गंभीर मामला है, इसलिए हम यह कहने के लिए तैयार हैं कि मजिस्ट्रेट का कर्तव्य होगा कि वह झूठी और तुच्छ शिकायतों को रोके जो मूल्यवान न्यायिक समय को खा जाए। यदि शिकायत खारिज करने का आदेश देती है, तो मजिस्ट्रेट को वैधानिक रूप से अपने संक्षिप्त कारणों को दर्ज करने के लिए अनिवार्य किया जाता है। इसके विपरीत, यदि ऐसी सामग्रियों से न्यायिक दिमाग के आवेदन पर प्रथम दृष्टया संतुष्टि मिलती है कि "अनुचित" किया गया है और कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है, तो मजिस्ट्रेट प्रक्रिया जारी करने से किसी अन्य बाधा के तहत नहीं है। एक प्रथम दृष्टया मामला बनने पर और भले ही दोनों पक्षों पर बहुत कुछ कहा जा सकता है, मजिस्ट्रेट के पास मुकदमे के लिए एक आरोपी को सौंपने के अलावा कोई विकल्प नहीं होगा, जैसा कि चंद्र देव सिंह (उपरोक्त) में माना गया है। जारी करने की प्रक्रिया के चरण में कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता वैधानिक अधिदेश नहीं है; इसलिए, मजिस्ट्रेट को जारी करने की प्रक्रिया के कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता नहीं है। यह भी कानून 253 है।

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 254

इस न्यायालय द्वारा जगदीश राम बनाम राजस्थान राज्य 25 में घोषित किया गया। इसके बाद से

यह वैधानिक अधिदेश नहीं है कि राय बनाने के समर्थन में कारण दर्ज किए जाने चाहिए कि कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है, जबकि शिकायत को खारिज करने के लिए संक्षिप्त कारणों का समर्थन करना पड़ता है, दोनों स्थितियों में संतुष्टि की डिग्री हमेशा भिन्न होनी चाहिए। जबकि पूर्व में यह संलिप्तता की संभावना के आधार पर एक प्रथम दृष्टया संतुष्टि है, बाद वाले को इस बात में अधिक संतुष्टि की आवश्यकता होगी कि मजिस्ट्रेट को कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार के अभाव के कारण बर्खास्तगी की गारंटी देने वाली शिकायत के बारे में अपना अंतिम और निर्णायक दृष्टिकोण व्यक्त करना होगा।

45. मानहानि की शिकायत के संदर्भ में, जिस स्तर पर मजिस्ट्रेट प्रक्रिया जारी करने के लिए आगे बढ़ता है, उसे शिकायत और अन्य सामग्री (धारा 200/धारा 202 में निर्दिष्ट प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त) में आरोपों के आधार पर अपनी राय बनानी होती है कि क्या 'कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार' 'दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त आधार' से अलग के रूप में मौजूद है, जिसे मुकदमे में निर्धारण के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए, न कि उस स्तर पर जब प्रक्रिया जारी की जाती है। हालाँकि कानून में ऐसा कुछ भी नहीं है जो स्पष्ट शब्दों में मजिस्ट्रेट को इस बात पर विचार करने के लिए अनिवार्य करता है कि क्या आई. पी. सी. की धारा 499 के किसी भी अपवाद को आकर्षित किया गया है, लेकिन कोई प्रतिबंध भी नहीं है। आखिरकार, जो 'अपवाद' है वह प्रावधान की शर्तों पर मानहानि नहीं हो सकती है। हम यह महसूस करते हैं कि अक्सर, यह राय बनाना मुश्किल होगा कि उस समय एक अपवाद आकर्षित किया जाता है क्योंकि न तो मानहानि की शिकायत (जो आपराधिक अदालतों में एक नियमित घटना नहीं है) सामग्री के साथ तैयार की जाने की संभावना है, न ही शपथ और साक्ष्य पर बयान दिए जाने की संभावना है, जिससे आरोपी को सीमा पर भागने का रास्ता मिलता है। हालाँकि, हम यह दोहराने में जल्दबाजी करते हैं कि यह कानून नहीं है कि मजिस्ट्रेट किसी भी तरह से इस पर विचार करने से वंचित है कि क्या किसी दिए गए मामले में कोई भी अपवाद आकर्षित किया गया है; मजिस्ट्रेट इस पर विचार करने से किसी भी तरह से बाधित नहीं है, विशेष रूप से इसलिए कि कोई ऐसा व्यक्ति होने के नाते जो कानूनी रूप से प्रशिक्षित है, यह उम्मीद की जाती है कि प्रक्रिया जारी करते समय उसे इस बात का स्पष्ट विचार होगा कि मानहानि क्या है। यदि, अप्रत्याशित घटना में, शिकायत की सामग्री और शपथ पर सहायक बयानों के साथ-साथ जांच/जांच की रिपोर्ट आई. पी. सी. की धारा 499 के किसी भी अपवाद के तहत पूर्ण बचाव का खुलासा करती है, तो मजिस्ट्रेट, के उचित आवेदन पर

25 (2004) 4 एस. सी. सी. 432

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

न्यायिक दिमाग, इस तरह के आधार पर शिकायत को खारिज करने के लिए न्यायसंगत होगा और यह अधिकार क्षेत्र से अधिक कार्य नहीं होगा यदि इस तरह की बर्खास्तगी में कारणों का समर्थन है।

46. भारतीय दंड संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालयों द्वारा अधिकारिता के प्रयोग के पहलू को ध्यान में रखते हुए। पी. सी., एक ऐसे मामले में जहां अभियुक्त द्वारा मानहानि का दावा किया जाता है कि किसी भी अपवाद के आधार पर नहीं किया गया है और रद्द करने का अनुरोध किया जाता है, कानून अच्छी तरह से तय प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय आगे नहीं जा सकते हैं और जांच का दायरा बढ़ा सकते हैं यदि अभियुक्त उन सामग्रियों पर भरोसा करना चाहते हैं जो मजिस्ट्रेट के सामने नहीं थीं। यह इस सरल प्रस्ताव पर आधारित है कि मजिस्ट्रेट जो नहीं कर सके, वह उच्च न्यायालय नहीं कर सकते। हमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 द्वारा सुरक्षित उच्च न्यायालयों की शक्तियों को कम करने के लिए नहीं समझा जा सकता है। पी. सी. ऐसी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए हमेशा उपलब्ध रहते हैं, अर्थात् प्रशासन के लिए वास्तविक और पर्याप्त न्याय करने के लिए, जिसमें केवल उच्च न्यायालय मौजूद हैं। तथापि, भारतीय दंड संहिता की धारा 482 के तहत अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालयों द्वारा पुलिस रिपोर्ट से उत्पन्न एफ. आई. आर. या आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए निर्धारित परीक्षण। पी. सी. धारा 200 के साथ पठित धारा 204 के तहत जारी प्रक्रिया को रद्द करने के लिए निर्धारित परीक्षणों से काफी अलग नहीं होने के कारण, उच्च न्यायालयों को उचित संतुष्टि दर्ज करने पर हस्तक्षेप करने का अधिकार है यदि शिकायत को पढ़ने पर, शिकायतकर्ता और गवाह की शपथ पर बयानों का सार, यदि कोई हो, और प्रस्तुत किए गए दस्तावेजी साक्ष्य, कोई अपराध नहीं है और यदि कार्यवाही जारी रखने की अनुमति दी जाती है, तो यह कानूनी प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। यह भी अस्वीकार्य होगा, यदि किसी दिए गए मामले का न्याय अत्यधिक मांग नहीं करता है।

47. कानून की हमारी समझ और हमने जो तर्क अपनाया है, उसके आधार पर, धारा 200, दंड प्रक्रिया संहिता के साथ पठित धारा 204 के तहत प्रक्रिया जारी की जाती है। पी. सी. आई. पी. सी. की धारा 499 के अपवादों पर विचार न करने के लिए वास्तव में दूषित नहीं है, जब तक कि, निश्चित रूप से, उच्च न्यायालय के समक्ष यह आश्वस्त रूप से प्रदर्शित नहीं किया जाता है कि शिकायत और मजिस्ट्रेट के सामने मौजूद सामग्री के आधार पर भी और बिना कुछ और होने के, कथित तथ्य प्रथम दृष्टया मानहानि का कारण नहीं बनते हैं और इसके परिणामस्वरूप, कार्यवाही को बंद करने की आवश्यकता है।

48. उपरोक्त चर्चा हमारे द्वारा तैयार किए गए कानून के प्रश्नों का उत्तर देती है।

255

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक GMBH बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.] 256

49. प्रश्न (क) के उत्तर की ओर बढ़ते हुए, वर्तमान मामले में हमें जो लगता है वह यह है कि विचारण न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 का सहारा नहीं लिया। पी. सी. और इसलिए जांच या जांच की रिपोर्ट प्राप्त करना, जैसा भी मामला हो, सामने नहीं आया। हालांकि किसी भी वैधानिक आवश्यकता के तहत नहीं, ट्रायल कोर्ट ने अपने आदेश में दिमाग के अनुप्रयोग को दर्शाते हुए संक्षिप्त कारण दिए हैं। इस स्तर पर, जब विचारण न्यायालय ने समन

आदेश दिया, तो दो पहलुओं को संतुष्ट करने की आवश्यकता थी: (1) क्या शिकायत की याचिका में शिकायतकर्ता की जांच के साथ पढ़े गए अनियंत्रित आरोप, प्रथम दृष्टया, यह सुझाव देते हैं कि अपराध किया गया है, और (2) क्या आगे बढ़ना समीचीन और न्याय के हित में है। शिकायत की याचिका में लगाए गए आरोपों और शिकायतकर्ता द्वारा निचली अदालत के समक्ष रखे गए साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए और अभियुक्त को समन जारी करने के उसके 25 मार्च, 2010 के आदेश को स्पष्ट रूप से पढ़ने पर, हमें ऐसा नहीं लगता कि उस स्तर पर प्रथम दृष्टया मामले का अंत इतना अपमानजनक रूप से अतार्किक या कानूनी सिद्धांतों और स्वीकार्य मानकों की अवहेलना है कि यह इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप के योग्य होगा। यदि चौथे अपवाद या किसी अन्य अभ्यावेदन अपवाद के लाभ का लाभ उठाया जाना है, तो अपीलार्थी विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने और कानूनी रूप से उसके लिए जो भी बचाव उपलब्ध है, उसे उठाने के लिए स्वतंत्र होगा, न कि आवश्यक रूप से चौथे अपवाद को स्वीकार करते हुए, विचारण न्यायालय द्वारा उसके उचित विचार के लिए।

50. इस मामले के तथ्यों पर, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि निचली अदालत को उसके समक्ष मौजूद सामग्री के आधार पर अभियुक्त को समन जारी करने में अन्याय नहीं किया गया था।

51. हम यह भी मानते हैं कि अपीलार्थी द्वारा याचिका में उठाए गए अन्य बिंदुओं पर विचार करने में विद्वान न्यायाधीश की चूक हमारे लिए हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं है, यह देखते हुए कि अग्रवाल की याचिका पर उसी दिन दिए गए एक विस्तृत निर्णय से, विद्वान न्यायाधीश ने अपना दिमाग लगाया था और इसी तरह की चुनौती को ठुकरा दिया था। हालांकि, यह देखा गया है कि विद्वान न्यायाधीश को आदेश में एक सजा जोड़ने की अच्छी तरह से सलाह दी गई होगी, जिसमें कहा गया है कि समन आदेश को चुनौती देने वाली अग्रवाल की याचिका के निपटारे के लिए पहले से ही दिए गए कारणों को देखते हुए अपीलार्थी द्वारा उठाए गए अन्य बिंदुओं को निपटाने के लिए कोई अलग कारण नहीं दिया जा रहा है।

52. इस प्रकार, प्रश्न (क) का उत्तर अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

53. ऊपर दिए गए प्रश्नों (ख) और (ग) को ध्यान में रखते हुए हमें लंबे समय तक रोके रखने की आवश्यकता नहीं है। हम उन्हें अनुत्तरित छोड़ सकते थे लेकिन चूंकि कुछ तर्क उसी को छूते हुए आगे बढ़े थे, इसलिए हम इसके बारे में संक्षिप्त जानकारी देने का प्रस्ताव करते हैं।

54. प्रश्न (ख) का उत्तर अनिवार्य रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर होना चाहिए, जिसका अर्थ है कि मुकदमे के दौरान साक्ष्य की गुणवत्ता और उससे जुड़ा वजन। इस स्तर पर श्री तनेजा द्वारा दिए गए तर्क की दूसरी पंक्ति पर विचार करना अनुचित नहीं होगा कि जिन दस्तावेजों/सामग्रियों पर अपीलकर्ता भरोसा करना चाहता है, उन्हें शिकायतकर्ता द्वारा स्वीकार

या स्वीकार नहीं किया गया है और अभी तक साबित नहीं किया गया है; इसलिए, रद्द करने के अनुरोध पर विचार करते समय इस पर विचार नहीं किया जा सकता है। सुप्रिया जैन (उपरोक्त) मामले में निर्णय का अनुपात चांद धवन (श्रीमती) बनाम जवाहरलाल 26 मामले में इस न्यायालय के पहले के निर्णय का समर्थन करता है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत अतिरिक्त सामग्री पर भरोसा करके शिकायत और आपराधिक कार्यवाही को अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग के आधार पर रद्द करने में न्यायसंगत नहीं ठहराया था, जिसे साक्ष्य में स्वीकार नहीं किया गया था या शिकायतकर्ता द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था।

55. अधिवक्ता की शक्ति अभी तक अपीलार्थी द्वारा कानून के अनुसार साबित नहीं हुई है और इसलिए, विद्वान न्यायाधीश द्वारा विचार नहीं किया जा सकता था और इस न्यायालय द्वारा भी विचार नहीं किया जा सकता था। यदि सिद्ध भी हो जाता है, तो भी इसके प्रभाव और महत्व पर विचारण न्यायालय द्वारा एक अपवाद की प्रयोज्यता के लिए मार्गदर्शक कारकों के आलोक में विचार किया जाना आवश्यक है, जैसा कि माननीय ओ. चिन्नाप्पा रेड्डी, जे. इन द्वारा लिखित सहमति वाले निर्णय में संकेत दिया गया है।

सेवाक्रम सोभानी (ऊपर)।

56. हालाँकि, यदि साक्ष्य से यह स्थापित होता है कि अधिकृत एजेंट ने प्रिंसिपल की सहमति से मानहानिकारक बयान जारी किए थे या कि प्रिंसिपल को सहमति दिए बिना, ऐसे मानहानिकारक बयानों की उचित जानकारी थी, फिर भी, एजेंट को ऐसा करने के लिए आगाह/फटकार नहीं लगाई या इस तरह के बयानों को अस्वीकार नहीं किया था, तो मानहानि के लिए अभियोजन को इस आधार पर शुरू में ही बंद करने का कोई कारण नहीं है कि एक अधिकृत एजेंट को कानूनी रूप से कार्य करना चाहिए और गैरकानूनी रूप से नहीं।

26 (1992) 3 एससीसी 317 257

मेसर्स IVECO मैगिरस ब्रांडशूटटेकनिक जी. एम. बी. एच. बनाम निर्मल किशोर भारत [दीपांकर दत्ता, जे.]

57. प्रश्न (ग) की ओर रुख करते हुए, यह अपीलार्थी के लिए है कि वह विचारण न्यायालय के समक्ष प्रदर्शित करे कि चौथा अपवाद आकर्षित है, या किसी अन्य बचाव का अनुरोध करे, और विचारण के दौरान उसके संबंध में सबूत के अपने बोझ का निर्वहन करे। यह, हमारी राय में, एक या दूसरे तरीके से राय देने के लिए सही चरण नहीं है और इसलिए, हम इसे कानून के अनुसार निचली अदालत द्वारा निर्णय लेने के लिए खुला छोड़ते हैं।

निष्कर्ष

58. सभी प्रश्नों के उत्तर देने के बाद, हमारे लिए जो बचा है वह उस अपील को खारिज करना है जिसका हम एतद्द्वारा आदेश देते हैं। अपील खारिज कर दी जाती है, जिसके परिणामस्वरूप अंतरिम आदेश तुरंत खाली हो जाएगा। हालाँकि, लागत के लिए कोई आदेश नहीं होगा।

59. इस निर्णय द्वारा तय की गई सीमा को छोड़कर, अन्य सभी बिंदुओं को ट्रायल कोर्ट के समक्ष अपीलकर्ता द्वारा उसके द्वारा निर्णय के लिए आग्रह करने के लिए खुला छोड़ दिया जाता है।

60. चूंकि कार्यवाही में अनावश्यक देरी हुई है, इसलिए निचली अदालत को इसमें तेजी लाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

द्वारा तैयार किए गए हेडनोट:

याचिका खारिज कर दी गई।

अंकित ज्ञान